नया समाज

उदयशंकर भट्ट

म सि जी वी प्र का श न

नया समाज

(नाटक)

Naya Samaj

Drama

उदयशंकर भट्ट

Audaya Shankar Bhat

नई दिल्ली

मसिजीवी प्रकाशन

Missjivi Publications New...

नया समाज

आज नाटक के लिए दो बातों की आवश्यकता है—नये विचारों की वैज्ञानिक दृष्टि से उपस्थिति और रंगमंच का पुनर्निर्माण। ये दोनों ही बातें नाटक के लिए आज जितनी आवश्यक हैं उतनी पहले कभी नहीं थीं। मनुष्य के विचारों में आज निरन्तर उथल-पुथल हो रही है; पुराना छिन्न-भिन्न हो रहा है, नये का निर्माण हो रहा है या वह निर्माण के पथ पर है। राज्यों की सत्ताएँ नष्ट होकर नये रूप में उभर रही हैं। समाज के दृष्टिकोण बदल रहे हैं। व्यक्ति के विचारों में तूफान उठ रहा है। मानो सम्पूर्ण जीवन नये तर्कों में नवीन शक्ति भरकर आकाश, पाताल और मर्त्यलोक की समस्याओं को हल कर लेना चाहता है। प्रत्येक स्तर का समाज और व्यक्ति नये जीवन-दर्शन की ओर उन्मुख है। शायद इतना जागरण इतिहास में पहले कभी नहीं हुआ। इसलिए कि आज से पूर्व मनुष्य में अपने प्रति चेतना का जागरण इतना कभी नहीं हुआ था। आज जो-कुछ टूट रहा है, छिन्न-भिन्न हो रहा है, उसका व्यामोह, नये के प्रति रुचि का आकर्षण, उठने, चलने और दौड़ने की क्षमता में जीवन अपने अर्थ की, अपनी स्थिति की समस्याओं को हल कर लेना चाहता है। वस्तुतः यह अर्थ-युग है, जिसमें मनुष्य पूर्णरूप से स्वतन्त्र होना चाहता है। वास्तविक ध्येय उसका स्वतन्त्र होना है—समाज-सापेक्ष्य स्वातन्त्र्य, व्यक्ति-सापेक्ष्य-आर्थिक-स्वातन्त्र्य तथा अपने अस्तित्व के प्रति सजगता। जैसे यह दृष्टि परिस्थितिजन्य रूढ़िगत पर्वतों के तामस प्राकारों को चीरकर निकल रही हो। नदी के तेज बहाव की तरह जीवन संघर्षों के तटों से टकराता, परिस्थिति के ऊँचे-ऊँचे कगारों

को तोड़ता, विघ्नकर बाँधों को चूर-चूर करके आगे बढ़ रहा है। बाहर से उतना क्रान्तिकर न दीखते हुए भी जैसे सम्पूर्ण चेतन भीतर-ही-भीतर द्रुत गति से किसी दिशा को दौड़ रहा है। आज मनुष्य के चिन्तन में केवल रस-जागृति की अपेक्षा अपने अस्तित्व के तर्क का दबाव अधिक जबरदस्त हो उठा है। दया, माया, ममता, मोह भी जैसे तर्क-संगत, सन्तुलित और वैज्ञानिक आधार माँग रहे हैं। पुत्र पिता के प्रति उतनी ही दया कर सकता है, उतना आदर दे सकता है जितने से उसके स्वार्थ में, उसके निहित जीवन-दृष्टिकोण में बाधा न पड़े। स्त्री पति को उतना दे सकती है जितना सहज रूप से आत्म-सम्मान के साथ दिया जा सकता है। वस्तुतः स्त्री-पुरुष, पति-पत्नी के सम्बन्धों में व्यावहारिकता ने, अर्थ-दृष्टि ने एक नया मान खड़ा कर दिया है। कोई भी किसी का दास बनकर नहीं रहना चाहता है। आज की आर्थिक स्वातन्त्र्य दृष्टि ने प्रेम को भी नये मूल्यों से नापना शुरू कर दिया है। प्रतिदान का स्थान जैसे सीमित हो गया हो।

ऐसा नहीं है कि यह सब अपने-आप हो गया हो, अपने-आप विचार उत्पन्न हो गए हों। मनुष्य की आमूल चेतना में पीड़ा, दबाव का परिस्थितियों से निरन्तर संघर्ष होते रहने और विचारों में क्रियात्मकता की प्रबलता होने की दशा में यह चेष्टा न जाने कितने काल से व्यक्ति में जागरूक होती रही है। जैसे पत्थर घिसते-घिसते गोल हो जाता है, खान से निकला हीरा रगड़ खाकर चमकने लगता है इसी तरह मनुष्य के विचार निरन्तर संघर्ष से रगड़े जाकर क्रियात्मकता का रूप लेते हैं।

साहित्य मनुष्य के इन्हीं विचारों को सदा से प्रतिबिम्बित करता रहा है। पहले केवल देश का एक विशेष वर्ग, एक विशेष जाति प्रबल और सर्वाधिक सक्षम होने के कारण लेखक को उसके प्रति सोचने को बाध्य करती थी, क्योंकि साहित्यकार की आर्थिक बागडोर, उसके यश का प्रमाण-पत्र, उस वर्ग के हाथ में था। तभी तो एक ने कहा, 'दिल्ली-

श्वरोवा जगदीश्वरोवा मनोरथान् पूरयितुं समर्थः ।' वैसे तो साहित्य-कार मुक्त आज भी नहीं हुआ है, किन्तु उसके सोचने के स्वातन्त्र्य एवं भरण-पोषण के मार्ग दूसरे हो गए हैं। फिर नई जागतिक चेतना ने उसके पाठक भी पैदा कर दिये हैं। इसीलिए वह आज किसी वर्ग-विशेष का लेखक न होकर बहुतों का बन गया है और पाठक के प्रति अपने दायित्व को समझने लगा है। साहित्य के कल्याणकारी अंग नाटक के प्रति भी उसकी दृष्टि पहले यही थी। इसीलिए राजाओं के वैभव-प्रदर्शन से हटकर संस्कृत में एक ही 'मृच्छकटिक' नाटक लिखा गया, यद्यपि उस नाटक में भी राजा नहीं है पर उसका साला जरूर है।

हिन्दी नाटक उस दिशा में भिन्न है। इसका एक कारण यह है कि उस (हिन्दी) ने कभी राज नहीं किया। वह जनता से निकली और सर्वसाधारण के प्राणों की आहुति पाकर पुष्ट हुई। आज स्वतन्त्रता के बाद हिन्दी-नाटक की माँग बढ़ रही है। लोग नाटक पढ़ने की अपेक्षा नाटक देखना पसन्द करने लगे हैं। दुर्भाग्य है कि विश्वविद्यालयों में नाटक एक विषय होने के कारण न जाने कितने नाटक प्रतिवर्ष लिखे जाते हैं और वे परीक्षाओं में लगते हैं। पर रंगमंच की कसौटी पर वे खरे नहीं उतर पाते। उतरें भी कहाँ से, जिन्होंने इन्हें लिखा है वे स्वयं इस ओर कभी ध्यान नहीं देते।

पिछले दिनों बम्बई में मुझे हिन्दी एकांकी नाटकों पर भाषण देने का अवसर मिला। मराठी के प्रसिद्ध नाटककार मामा वरेरकर सभापति थे। उन्होंने अपने भाषण में कहा, "जब नाटक खेले नहीं जाते, तब मेरी समझ में नहीं आता नाटक लिखने का और क्या अर्थ हो सकता है।" उनकी इस बात में काफी सार है।

किन्तु अब हिन्दी नाटक का रूप बदल रहा है। हिन्दी के रंगमंच की जगह-जगह स्थापना हो रही है। ऐसी दशा में यह आवश्यक है कि जो नाटक लिखे जायँ उन्हें खेलने का प्रयत्न किया जाय। हमारे यहाँ अधिकतर नाटक ऐतिहासिक हैं। उनमें आधुनिकता होते हुए भी वे

आज की समस्याओं को स्पर्श नहीं करते, दर्शक के चित्रण को नहीं बढ़ाते, उन्हें अपना रूप नाटक में देखने को बाध्य नहीं करते और हमारी आज की समस्याओं के प्रति वास्तविक दृष्टि प्रदान नहीं करते।

आज नाटककार को अपना 'कंटेण्ट' बदलने की आवश्यकता है; वस्तु का रूप जीवन-व्यापी बनाने की आवश्यकता है। केवल मनो-रंजन-प्रधान, समय बिताने वाले नाटकों का युग नहीं है। जब कि आज का युग पुरानी और नवीन की देहली पर खड़ा है तब हमें प्रकाश की आवश्यकता है। मनुष्य के अचेतन और उपचेतन मन के भीतर की प्रवृत्तियों को कुरेदकर उन्हें अपने रूप को समझने देने की आवश्य-कता है। आदर्श और यथार्थ का अन्तर केवल इतना ही नहीं है कि यथार्थ के द्वारा हम मनुष्य के गुण-अवगुण को प्रतिबिम्बित कर सकें। ज़रूरत है कि हम उन दोनों की मूलगत प्रवृत्तियों पर भी प्रकाश डालें।

पुराने नाटकों में नायक और खलनायक, नायिका और खल-नायिका एक निश्चित परिमाण में अपनी-अपनी सीमा में गुणावगुण का प्रदर्शन करते थे। नायक की दिशाएँ निर्दिष्ट थीं। उसे गुणवान, संगीतज्ञ, वीर, कला-प्रेमी होना ही चाहिए। इसी तरह खलनायक निर्गुण, क्रूर हो, इस प्रकार की निश्चित दिशाएँ निर्दिष्ट थीं। उस समय हम यह मानकर चलते थे कि जो मनुष्य गुणवान है वह सब तरह से आदर्श व्यक्ति है और दूसरा सर्वथा विपरीत।' आज के मनो-विज्ञान ने यह बात व्यर्थ कर दी है। जीवन में भी हम किसी गुणी को आमूल गुणी नहीं मान सकते और न किसी को आमूल बुरा। जो बुरा है उसमें भी गुण है और जो गुणी है उसमें भी अवगुण। यह युग की दृष्टि है। सफेद कपड़े की तरह मनुष्य के मन पर सामाजिक संस्कारों, परिस्थितियों, की छाप पड़ती रहती है। मूलतः मनुष्य न बुरा है न भला। फिर जो एक बात में बुरा है वह दूसरी बात में अच्छा भी हो सकता है। हमारे मानस की ग्रन्थियाँ निरन्तर खुलती और बँधती रहती हैं। मनुष्य जो कुछ बाहर से दिखाई देता है वही वह नहीं होता और

भी बहुत कुछ उसमें निहित है। इसीलिए एक बुरा अच्छा भी है और अच्छा बुरा। जैसे-ही-जैसे युग बढ़ता है वैसे-ही-वैसे मानव-मन अधिक संश्लिष्ट, अधिक ग्रन्थिमय, अधिक गुंफित होता जाता है। बुराइयों के छिपाने का उसका कौशल निहायत चुस्त और सभ्यतापूर्ण होता जाता है। इसलिए उस युग के लिए आदर्श ही यथार्थ था। क्योंकि मनुष्य इतना पेचीदा नहीं बना था। आज सामाजिक मर्यादा, राजनीतिक जीवन में धार्मिक कुण्ठाओं ने अपने को छिपाने की कला में जैसे निपुण बना दिया है। यह रूप इसलिए हुआ कि मनुष्य अपने वास्तविक रूप में जिन्दा नहीं रह सकता। कौन कह सकता है एक न्यायाधीश, जो न्याय की कुरसी पर बैठा एक को फाँसी की सजा दे रहा है उसके भीतर भी कहीं हत्या की प्रवृत्ति के अंकुर नहीं हैं, या वह भी मौका आ पड़ने पर हत्या नहीं करेगा; एक नारी, जो आजीवन पतिव्रत्य का ढोंग रचती रही है, समय मिलने पर पुंश्चली का रूप नहीं धारण कर सकेगी? आज साहित्य का काम इन्हीं कारणों से अधिक दुरूह है और नाटक का तो और भी अधिक, क्योंकि नाटक मानव-जीवन का प्रतिबिम्ब है। जहाँ नाटक युग का प्रतीक है वहाँ वह स्वयं अपने में भी एक प्रतीक है। उसकी सांकेतिकता जितनी ही तीक्ष्ण और जितनी व्यापक होगी उतना ही प्रभावशाली वह होगा। इसीलिए कला के आनुषंग से नाटक में सूक्ष्म जीवन का दर्शन होना चाहिए, मार्मिक ढंग से 'सु' और 'कु' का उद्घाटन। एक बात और—मैं मानता हूँ नाटक में मनोरंजन को प्रधानता नहीं दी जानी चाहिए, प्रधान होनी चाहिए समस्या। मनो-रंजन की प्रधानता उद्देश्य में बाधक होती है। मूल के प्रति तीक्ष्ण दृष्टि न रखकर मनोरंजन-प्रधान जो नाटक लिखे जाते हैं उनमें दर्शक का भले ही विनोद होता हो ध्येय-सिद्धि नहीं होती। गम्भीर-से-गम्भीर समस्याएँ लेकर जो नाटककार आता है उसकी बात अपना प्रभाव नहीं डालती। वह हवा की तरह उड़ जाती है या पानी पर ढेला मारकर लहर पैदा करने को तरह व्यर्थ होती है। मनोरंजन उतना होना चाहिए

जो दर्शक को गुदगुदा-भर दे। अट्टहास में कथा-वस्तु उड़ जाती है और नाटककार का ध्येय व्यर्थ हो जाता है। उसका उचित प्रभाव नहीं पड़ता।

दूसरी बात है रंगमंच की। जैसे मनुष्य के विभिन्न रूप को प्रतिबिम्बित करके हम रंगमंच पर उतारते हैं इसी तरह रंगमंच उसकी स्थिति का प्रदर्शन करता है; उसकी रुचि, अरुचि का चित्र देता है। रंगमंच स्वयं कुछ भी नहीं है; वह उस मकान की तरह है जहाँ मनुष्य रहता है। जहाँ तक हो सके रंगमंच सानुरूप, सादा और सहज होना चाहिए, स्वाभाविकता का प्रदर्शन रंगमंच का विशेष गुण होना चाहिए। रंगमंच को सजाने की कला में मैं विश्वास नहीं करता। न मैं यही मानता हूँ कि आपेक्षिक सामग्री-प्रदर्शन के अलावा जहाँ पात्रों को आकर अपनी कथा प्रस्तुत करनी है, उसे व्यर्थ की अनावश्यक चीजों से भर दिया जाय। कला रंगमंच की सादगी में है उसकी चमक-दमक में नहीं। अन्यथा दर्शक यही जानता रहेगा कि वह नाटक देख रहा है। नाटक की सफलता इसमें है कि पात्रों के साथ उसका तादात्म्य हो जाय; दर्शक और दृश्य में भेद न रहे। तल्लीनता नाटक की सफलता की कसौटी होनी चाहिए। इसीलिए रंगमंच पर प्रकाश भी उतना अपेक्षित है जितने से दर्शक को पात्रों के मन के भीतर प्रवेश करने की सुविधा हो, उनकी चेष्टाएँ, उनके मानसिक विकार, पढ़ने में सरलता हो।

हिन्दी के नाटक के लिए एक बात और ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि वह रंगमंच सरलता से सम्पन्न हो सके। जहाँ तक हो वह सर्वसाधारण द्वारा तैयार किया जा सके, इसलिए दृश्य-परिवर्तनों में भी विशेष कठिनाई नहीं होनी चाहिए। स्पष्ट बात तो यह है कि नाटक और रंगमंच दोनों को दिखावट और अनुचित 'शो' से दूर रखा जाय तथा नाटक में व्यंग्य की तीक्ष्णता को प्रधानता दी जाय। वस्तु में जीवन हो और उसकी समस्याएँ। जीवन में मनुष्यत्व को उभारना ही आज के साहित्य का ध्येय होना चाहिए।

होना तो यह चाहिए था कि जब जमींदारी समाप्त हो रही थी या होने वाली थी उस समय यह नाटक प्रकाशित होता, परन्तु यह नहीं हुआ। लिखने की इच्छा होने पर भी न तो उतना समय मिला और न विचार ही ठीक-ठीक जम पाये। पर बात केवल यही नहीं है कि यह नाटक जमींदारी प्रथा के उन्मूलन पर है; इसमें और भी है। और जो-कुछ है वह तो पाठक और श्रोता पढ़ और देखकर ही पा सकेंगे। फिर भी मेरा इतना कहना है कि किसी रूढ़ि या परम्परा के नष्ट होने पर भी उसके भग्नावशेष बने रहते हैं। जिनकी जमींदारी गई है उनका व्यामोह अभी टूटा नहीं है। तपेदिकी मुर्दे के घर से उठ जाने पर भी घरवाले अब भी कभी-कभी रोते नजर आते हैं और न जाने कब तक वैसे दिखाई देंगे। व्यक्ति के अवचेतन मन में धारणाएं ऊपर के मन से हटकर उपचेतन या और नीचे जा पहुँची हैं, वे किस प्रकार उसे प्रताड़ित करती रहती हैं इसी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण इस नाटक में है। एक बात और, केवल एक जमींदार के विगत वैभव का ही इसमें प्रदर्शन नहीं है। उसके परिवार की समस्या, उसकी गतिविधि का भी चित्र इसमें है; जिसमें एक न्यूरोसिस है दूसरा बेलगाम। ये दोनों ही रोग अभी तक चिरंजीवी हैं।

इस नाटक में पात्र थोड़े हैं और छब्बीस घण्टे का कार्यक्रम। इसका वस्तु-निर्देश भी नया है। छहों दृश्य एक ही कमरे में आते हैं। साधारण तथा आजकल की-सी कमरे की बनावट के कारण इसके खेलने में भी बहुत अड़चन नहीं हो सकती। हिन्दी में अभी रंगमंच बन रहा है। दर्शक बढ़ रहे हैं। एकांकी नाटकों ने भी बड़े नाटक खेलने के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया है। इन सभी दृष्टियों को ध्यान में रखकर मैंने यह नाटक लिखा है। यदि यह दर्शकों में उठती दिन-रात की समस्याओं का तनिक भी समाधान कर सका तो मुझे परितोष होगा।

—उदयशंकर भट्ट

पात्र-सूची

मनोहरसिंह	जमींदारी की समाप्ति के बाद का जमींदार
चन्द्रवदनसिंह (चन्दू)	मनोहरसिंह का लड़का
धीरेन्द्रसिंह (धीरू बाबू)	मनोहरसिंह के मित्र का लड़का, सरकारी नौकर
कामना	मनोहरसिंह की लड़की
रीटा	एक ईसाई लड़की
रूपा	नौकर
घेरू	माली
दादा	रूपा का पालक
पण्डित	
मनोरमा	डाक्टर की लड़की
डाक्टर	पड़ौसी

मनोहरसिंह—जमींदारी बीतने पर भी उसका स्वप्न देखने वाला, रूढ़िवादी, तेज़, वही स्वभाव, जो एक जमींदार में सम्भव है। उम्र ६० साल। रौबीला मुँह, साधारण कद, रंग गोरा, मूँछें सफेद ऊपर को सुती हुई। काठी मझोली। मलमल का कुर्ता, ऊपर वंडी, पगड़ी बाँधे, कभी नंगे सिर, पट्टीदार बाल, आँखों में मादकता, बड़ी-बड़ी लाल आँखें।

चन्दू—२०-२२ साल का, गोरा रंग, कद ऊँचा, हल्की देह, आँखों में नशा-सा, अप-टू-डेट, प्रकृति में उद्दण्ड, क्रोधी स्वभाव, बुद्धि

साधारण, बी० ए० तक पढ़ा। कड़ा व्यक्तित्व, स्त्री-प्रेमी, सुन्दर गायक।

धीरू—सरकारी कर्मचारी का बुद्धिमान् प्रतीक।

कामना—न्यूरोसिस तथा चिन्तनशील, पर प्रतिभाशाली। सुन्दर गठन, मादक व्यक्तित्व, २२ साल की उम्र। लापरवाह। कभी-कभी आत्म-व्यथा से पीड़ित। आत्मरत और कुशल।

रीटा—फेनेटिक-साधारण बुद्धिवाली, उम्र २० के आसपास। रंग सांवला पर मोहक, गठन मध्यम। अपनी मोहकता के प्रति गर्विणी।

मनोरमा—कवयित्री, मोहक व्यक्तित्व, रूपसी, अपने में खोई-सी।

प्रथम अंक

प्रथम दृश्य

[दस फरवरी, समय शाम के ४½ बजे ।]

[एक बड़ा चौकोर कमरा पुराने ढंग से सजा है । रंगमंच के सामने चार-पाँच आदमियों के बैठने लायक एक तख्त, मोटा गद्दा और उस पर सफेद चादर । तख्त के ऊपर एक गाव तकिया । तख्त के सामने बीच में गोल मेज पर फूलों का गुच्छा । दोनों किनारों से सटे हुए दो कॉउच; हल्के नीले रंग के । पूरब की तरफ एक शीशे-जड़ी अलमारी । एक तरफ कोने में चीते की खाल, स्टैन्ड पर । दीवार पर कृष्ण-अर्जुन का एक बड़ा चित्र । उसी के साथ मकान-मालिक ठाकुर मनोहरसिंह का एक तैल चित्र । दूसरी तरफ गदर की लड़ाई का एक चित्र । कमरे के दोनों ओर दो दरवाजे । एक से ठाकुर मनोहरसिंह के कमरे को रास्ता जाता है जो बन्द है । दूसरा भीतर घर में जाता है । यह सब रंग मंच के सामने है । उत्तर का भाग पूरी तरह खुला है । इस समय कमरे में मनोहरसिंह का लड़का चन्द्रवदनसिंह, नाम चन्दू, जिसकी उम्र २२-२३ साल, छरहरा बदन, बड़ी-बड़ी आँखें, लम्बी पतली नाक, उभरा माथा, गोरा रंग, सफेद बुशशर्ट और पतलून पहने बैठा है । सामने कॉउच पर एक ईसाई लड़की, साँवला रंग, देखने में आकर्षक, नाम मिस रीटा । धानी रंग की साड़ी पहने ।]

चन्दू—(अखबार तख्त पर मरोड़कर फेंकता हुआ सीटी के साथ-साथ एक टाँग पर दूसरी टाँग रखे हुए दोनों हाथ कॉउच के सिरे पर

फैलाकर) संगीन काम करने को संगीन वक्त चाहिए।

रीटा—यानी ?

चन्दू—चाय पीने को चार बजे का समय। प्रेम करने को……

रीटा—प्रेम करने को ?

चन्दू—ठहरो सोच लूँ, प्रेम करने को शाम का वक्त ! वैसे रात भी ठीक है ! करीबन करीबन…

रीटा—करीबन-करीबन जब भी मौका मिल जाय। (दोनों ठहाका मारकर हँसते हैं।) तो मैं चलूँ चन्द्र !

चन्दू—(साथ ही उठकर) ऐसी क्या जल्दी है ? बैठो न ! (आवाज लगाता हुआ) चाय वाय लो न।

रीटा—रहने दो चन्द्र, चाय मैं घर पर पी लूँगी। (उठने लगती है।)

चन्दू—(दरवाजे के पास जाकर आवाज लगाता हुआ) रूपा, ओ रूपा के बच्चे, जाने कहाँ मर गया। मैं अभी आया। (पश्चिम के दरवाजे से लौटकर) चाय आ रही है।

(चन्दू, कॉउच के पीछे उसके कन्धे छूता हुआ झुककर) कितना प्यारा नाम है रीटा ! (तुनककर) इस घर में कोई आराम नहीं है, नौकर एकदम पाजी।

रीटा—क्यों, बाबा कहाँ हैं ?

चन्दू—(उसी तरह) बाहर धूप में बैठे हुक्का पी रहे होंगे। (सामने आ जाता है।) वे एक दम पुराने जमाने के आदमी हैं। खाना उन्हें चाँदी के बरतनों में चाहिए। सामने रक्खा गिलास उठाकर नहीं पी सकते, हुक्का भरने को एक आदमी, खाली बैठे पैर दबाने के लिए नाई या खवास।

रीटा—तो बुरा क्या है ?

चन्दू—बुरा ! अरे यह भी समझती हो कौनसा जमाना जा रहा है। बाबा पैदल नहीं चल सकते। कहते हैं ताँगे पर बैठना कोई बैठना है,

जैसे कोई दौड़ के लिए बैठा हो। मोटर की सवारी को कहते हैं बहुत दौड़ती है; भला यह भी कोई सवारी है ? कितना चिल्लाती है। बाहर निकलेंगे तो उसी लिबास में—चोग़ा पहने, पगड़ी बाँधे। ज्योतिषी आकर मुहूर्त देखेगा, पूजा होगी, तब मन्त्र पढ़ते हुए निकलेंगे।

रीटा—(उछलकर) क्या सचमुच ? यह तो शहर से बाहर जाने के लिए होगा न ?

चन्दू—शहर में तो वे कहीं जाते ही नहीं। पहले तो ताम-झाम पर चलते थे। जिस किसी को मिलना हो यहीं आकर मिले। हुक्के की नली की खस हर आठवें दिन बदलनी ही चाहिए। खमीरे का पार्सल हर चौथे दिन लखनऊ से आता है। (कॉउच पर सामने बैठ जाता है।)

रीटा—(जैसे जबरदस्ती बोलना पड़ रहा हो) रईस आदमी हैं।

चन्दू—(गरदन अकड़ाकर) थे कभी, अब तो···

रीटा—यानी ?

चन्दू—जमींदारी छिनने से पहले बड़े ठाठ थे रीटा। मेरे देखते-देखते इस घर में बारह नौकर थे; इधर-उधर के आदमी अलग। (सिग-रेट जलाकर और जेब से चाकलेट निकालकर) लो रीटा, इंग्लिश है, तब तक चाय आती है।

रीटा—(तस्वीर के सामने खड़ी होकर) ये किसकी है ? सूरत-शक्ल तो ठीक है, पर कपड़े······

चन्दू—रहने दो, क्या करोगी जानकर !

रीटा—फिर भी, शायद तुम्हारे कोई देवता···

चन्दू—ये हैं भगवान् कृष्ण और अर्जुन। महाभारत की लड़ाई का चित्र है।

रीटा—महाभारत क्या ?

चन्दू—बहुत तो मैं भी नहीं जानता। अरे रहने भी दो, जिन्दगी बहुत छोटी है, रीटा।

रीटा—मुझे तो अपने धर्म की सभी बातें मालूम हैं।

चन्दू—मेरा दिमाग़ ब्लैंक पेपर है इन मामलों में।

रीटा—कहते हैं हिन्दू धर्म बहुत बड़ा है।

चन्दू—अरे होगा, आज तुम्हें हो क्या गया है? हमारा यह जीवन इन बातों को जानने के लिए नहीं है।

रीटा—भला यह कहानी कब की होगी?

चन्दू—(नाक-भौं सिकोड़कर) उफ् हो....यह बताना मुश्किल है। बाबा पुराने विचारों के आदमी हैं सो लगा दी यह तस्वीर। मैं समझता हूँ यह सब एक पचड़ा है—एक बकवास।

रीटा—लेकिन मैं तो हमेशा गिर्जा जाती हूँ।

चन्दू—मैं कोई ऐसी किताब पढ़ना पसन्द नहीं करता डार्लिंग। हाँ हमारा तुम्हारा......

रीटा—मैं जानना चाहती हूँ चन्द्र।

चन्दू—मैं भूल जाना चाहता हूँ मिस रीटा। जिन्दगी इसलिए नहीं है। लो चाय आ गई। (चिल्लाकर) अबे रूपा के बच्चे, इतनी देर, घण्टा-भर हो गया चिल्लाते-चिल्लाते। (डपटकर) गधे, नालायक कहीं के!

[जैसे ही रूपा चाय लेकर आगे बढ़ता है वैसे ही चन्दू का चिल्लाना सुनकर सिहर उठता है और हाथ से ट्रे छूट जाती है। झन्न ....से एक आवाज होती है। चन्दू झपटकर उसके गाल पर एक तमाचा जड़ देता है। जैसे ही वह दूसरा तमाचा मारने को आगे बढ़ता है कि कामना प्रवेश करती है। कामना बाईस साल की गम्भीर, सुन्दर और खोई हुई-सी लड़की। आँखों में मद, और चन्दू की-सी आकृति। लम्बा कद, छरहरा बदन।]

कामना—(हाथ में एक किताब लिये धीरे-धीरे आगे आती है।) क्या हुआ?

चन्दू—मैं इसकी जान निकाल दूँगा। (इसी बीच में एक चपत और जड़ता है। रीटा और कामना आगे आ जाती हैं।)

रीटा—बस करो।

कामना—मैं कहती हूँ, आखिर हुआ क्या तुम्हें ?

चन्दू—तुम्हीं ने इसे सिर चढ़ा रखा है। छोड़ दो, देखूँ मैं इसे।

कामना—लेकिन इतना चिल्लाने की क्या जरूरत है। बाबूजी के लिए हुक्का भर रहा था। चाय भी तो बनते-बनते ही बनेगी। तुम्हारे चिल्लाने से डर गया, ट्रे गिर गई। (रूपा से) जा उठ, दूसरी बार चाय बनाकर ला। दौड़ जा। (रूपा जाता है। कमरे से आवाज आती है, क्या हुआ ? कैसा शोर है ?) कुछ नहीं बाबा।

चन्दू—गुस्से में भरकर काउच पर धम्म से बैठता हुआ कड़कती आवाज में) नहीं, अब मैं चाय नहीं पिऊँगा। (नरम पड़कर) चलो रीटा, हम लोग किसी रेस्तराँ में चाय पियेंगे।

कामना—(किताब बन्द करके उस पर हाथ फेरती हुई) अभी बनी जाती है। रीटा, तुम बैठो न। बहुत दिनों बाद मिली हो। (चन्दू की तरफ) तुम लोग हथेली पर सरसों जमाना चाहते हो। नाराज न हो, मिस रीटा कोई बाहर की तो नहीं हैं।

चन्दू—और बाहर की होतीं तो क्या तुम इस नौकर पर हाथ चलाने देती कामना ? जैसे यह तुम्हारा सगा सम्बन्धी हो। (रीटा से) बाबा इससे नाराज हैं, मेरा यह रत्ती-भर काम नहीं करता, पर है यह घर में हमारी छाती पर मूँग दलने के लिए। बाहरवालों के सामने हमारी बेइज्जती के लिए, क्योंकि कामना बहन का सब काम करता है, उनका........

कामना—(उसी गम्भीरता से झिड़कती हुई, किताब के पन्ने बन्द करके) क्या बकते हो ? बोलने से पहले सोचना तो चाहिए।

चन्दू—(उसी तरह गरजता हुआ) मैं तुमसे डरता नहीं हूँ, मैं कहूँगा और सौ में कहूँगा। यह तुम्हारी ही शय है जिसने इसे बिगाड़ दिया।

रीटा—जाने भी दीजिए।

चन्दू—(उठकर) जाने क्यों दूँ, रोज का यही हाल है। (बैठता

हुआ) उस दिन मनोरमा के सामने भी यही हुआ।

कामना—(**किताब के पन्ने खोलकर हाथ फेरती हुई**) तो क्या मैंने उससे कहा है कि तू काम न कर। पर देखना चाहिए कि कौन काम किससे कितनी जल्दी हो सकता है। आखिर नौकर भी तो आदमी है।

चन्दू—(**खीझकर**) तो इसका टाइम-टेबल बना दो। चाय बनाने में एक घण्टा, आग जलाने में आध घण्टा, बरतन साफ करने में आधा दिन, एक तौलिया खूँटी से उठाकर देने में पन्द्रह मिनट और गिलास पानी लाने में सत्रह मिनट दस सेकंड वगैरा-वगैरा।

कामना—(**मुस्कराती हुई**) शायद तुम्हारा भी टाइम-टेबल बनाने की जरूरत है।

चन्दू—(**अन्तरंग में बात करता हुआ**) अब मैं अपना काम आप कर लिया करूँगा।

रीटा—होना तो यही चाहिए। इस जमाने में नौकर मिलते ही कहाँ हैं। शायद वह समय दूर नहीं, जब हर आदमी को अपना काम करना पड़ेगा।

चन्दू—(**तुनककर**) मिलता क्यों नहीं है, सब कुछ मिलता है, दस नौकर ला दूँ, पैसा दो।

कामना—पैसा देखकर खर्च करने का जमाना है चन्दू! पैसा है कहाँ? इस युग में पैसे के लिए ही तो संघर्ष है और अधिकार की भावना के लिए भी। हर आदमी जितना पैसा मिलता है, उतना काम करना चाहता है। जितना पैसा दो उतना काम लो। जैसे पैसा ही हमारा सब-कुछ बन गया हो। यह तो हमारा भाग्य है कि हमें गाली सुनकर, मार खाकर काम करने वाला एक नौकर मिल गया है।

चन्दू—तब तुम्हारी पहली बात गलत है।

कामना—जिसको आज हवा नहीं लगी उसे कल लग जायगी।

रीटा—अच्छा मैं चलूँ (**चीते की खाल की तरफ संकेत करके**) ओह,

हाऊ ब्यूटिफुल ! कहाँ से ली ?

चन्दू—हमारे बाबा बहुत बड़े शिकारी हैं।

रीटा—यह मुझे पसन्द है।

चन्दू—क्यों कामना ?

कामना—(किताब बन्द करके, भारी पलकों से देखकर) बाबा को यह बहुत पसन्द है। कभी-कभी जी ऊबता है तो चुपचाप आकर इस पर हाथ फेरते हैं। चाय आ गई। रख दे यहाँ मेज पर।

(रूपा मेज पर चाय रखता है।)

रीटा—अब आ गई है तो·······

चन्दू—नहीं नहीं, मैं नहीं पिऊँगा।

कामना—(मुस्कराकर) रीटा, तुम पियो तो चन्दू पियेगा। लो, मैं चाय बनाती हूँ।

रीटा—यह मनोरमा कौन है ? (चाय पीती है)

कामना—हमारे पड़ौस के डाक्टर की लड़की। (चन्दू की तरफ देखती हुई) इसीसे पूछो।

चन्दू—कामना की सखी।

कामना—(मुस्कराकर) बस और कुछ नहीं ?

रीटा—वह पोयेट ?

कामना—पोयेट वह कम नहीं है, अच्छा लिखती है।

रीटा—शायद हिन्दी-विन्दी में।

कामना—(सजग होकर) हिन्दी-विन्दी क्या ! अब भी तुम्हारा वही दिमाग है ?

रीटा—माफ कीजिए, क्या लैंग्वेज है। हमारी इंग्लिश—

कामना—इंग्लिश तुम्हारी कब से हो गई ? अभी परसों तक तुम्हारे बाप-दादा हिन्दी पढ़ते थे, हिन्दी में बोलते थे। अंग्रेजी इस देश की भाषा नहीं है रीटा।

रीटा—दुनिया की सबसे बड़ी भाषा है अंग्रेजी। क्या नहीं है उसमें ?

कामना—लो चन्दू चाय पियो। फिर भी पराई तो है। पराई माँ को अपनी माँ नहीं बनाया जा सकता, चाहे वह कितनी ही मालदार क्यों न हो।

चन्दू—खूब तर्क है। (हँसता है।)

कामना—(उसी स्वर में) क्यों इसमें क्या कुतर्क है?

रीटा—आधे हिन्दुस्तानी अंग्रेजी बोलते हैं। (चाय पीकर प्याला रख देती है और रूमाल से मुँह पोंछती है।)

कामना—तीन प्रतिशत से ज्यादा अंग्रेजी नहीं जानते, बोलना तो दूर की बात है।

रीटा—हम लोग तो अंग्रेजी बोलते हैं।

कामना—टूटी-फूटी। दाल में नमक के बराबर भी नहीं। फिर जितने बोलते हैं उतने क्या सभी अंग्रेजी जानते हैं? जानना और बोलना एक बात नहीं है। किसी भाषा के साहित्य को समझ सकना उस भाषा का जानना कहलाता है। क्षमा करना रीटा, तुमने धर्म के साथ उनकी भाषा अपना ली, यह तुम्हारी कमजोरी है। दूसरे देशों में लाखों ईसाई ऐसे हैं जो अपनी भाषा में बोलते और लिखते हैं।

रीटा—(उठकर) अंग्रेजी ईसाई धर्म की भाषा है, इसलिए हम बोलते हैं।

कामना—बस इतना सा ही ज्ञान है? जर्मनी, बेल्जियम, फ्रांस, रूस, पोलैण्ड सभी तो ईसाई हैं। क्या वे अपनी भाषा छोड़कर अंग्रेजी में बोलते हैं? और चाय पियोगी?

चन्दू—कहता था न कि फिजूल की बातें हैं।

कामना—फिजूल की बात नहीं है। कल तक शासक सोचते थे हम उनकी नकल करते थे। अब हममें से सबको सोचने का अवसर मिला है।

चन्दू—(अट्टहास करके) कामना बहन को उपदेश देने के लिए कोई मिल-भर जाय। फिर देखो, कैसा लेक्चर झाड़ती हैं। कहीं उपदेशकी क्यों नहीं कर लेतीं?

रीटा—(बैठती हुई) जितनी जोर से तुम यह बात कह सकती हो उतने ही जोर से मैं भी अपनी बात कह सकती हूँ ।

कामना—शायद झूठ की आँख से, विवेक के पंखों में पत्थर बाँधकर।

रीटा—सचाई मेरी तरफ भी तो हो सकती है ।

कामना—यह 'सकना' ही बतला रहा है कि भीतर एक कमजोरी है ।

रीटा—तो तुम समझती हो भारतवर्ष का ईसाई मूर्ख है ?

कामना—यह मैंने कब कहा ? मैं तो अपनी बात कहती हूँ कि कल तक हम जो भूल करते रहे, आज उसे सुधारने का समय है ।

चन्दू—लगता है तुम दिन-भर पड़ी-पड़ी यही सोचती हो । न जाने कौन-कौनसी किताबें बहन पढ़ती हैं। जब देखो आँखें गड़ाए पढ़ रही हैं । मैं तो कहता हूँ ज्यादा पढ़ना ही गलती है । बहुत ज्यादा जानने से आदमी किसी काम का नहीं रहता । जिन्दगी मिली है उसका मजा लो, खाओ पियो । मैं तो इसी में विश्वास करता हूँ ।

कामना—गनीमत है कि तुम कुछ विश्वास तो करते हो । मैं तो केवल अब तक यही जानती थी कि तुम केवल साँस लेना जानते हो ।

रीटा—मैं जानती हूँ जब तक सारा संसार ईसाई नहीं हो जाता तब तक शान्ति नहीं मिल सकती ।

कामना—तो इन दो बड़े युद्धों में लड़ने वाले ईसाई नहीं थे ? फिर क्यों लड़ाइयाँ हुईं ।

रीटा—वे लोग सही मानों में ईसाई नहीं थे ।

कामना—तो फिर सारी दुनिया के ईसाई होते ही सब सही मानों में ईसाई बन जायँगे, आपस में लड़ेंगे नहीं, इसका क्या सबूत है ? बात किसी मजहब के फैल जाने पर नहीं होती । उसके सचाई और ईमानदारी पर चलने से होती है । जरूरत इस बात की है कि लोगों में शान्ति से रहने की भावना पैदा की जाय । हर आदमी और देश एक-दूसरे के अस्तित्व को स्वीकार करे, जीवन के महत्त्व को समझे ।

चन्दू—सुनो कामना, तुम्हारे जैसे लोगों ने ही संसार में परेशानियाँ

पैदा की हैं; न तुम सोचो न कठिनाइयाँ आवें।×

रीटा—यह तो गलत बात है चन्द्रवदन बाबू।

कामना—जीवन प्रयोगों की माला है। यह जो कुछ भला-बुरा है, हमारे सोचने और न सोचने का परिणाम है। अच्छा मैं चली। मुझे अभी किताब खत्म करनी है। (चली जाती है।)

चन्दू—तुम इनकी बातों का बुरा मत मानना रीटा। रिकार्ड की तरह बोलती हैं। वैसे दिन-भर ऐसे पड़ी रहती हैं जैसे नशे में हों।

रीटा—शादी नहीं हुई?

चन्दू—ऐसी लड़की के साथ शादी करके····मैं नहीं समझ पाता क्या कहूँ, बीमार रहती हैं। बस दवा और किताब।

रीटा—काफी समझदार मालूम देती हैं।

चन्दू—काफी बददिमाग भी।

रीटा—सचमुच, मैंने इस प्रकार कभी नहीं सोचा था। नई बात है।

चन्दू—हर बात अक्सर नई-सी लगा करती है मिस रीटा। जिन्दगी नदी का एक मीठा बहाव है, उसकी हर लहर सुख पाने के लिए किनारे की तरफ़ दौड़ती है, बढ़ते जाना ही उसकी खूबी है।

रीटा—(मुस्कराकर) फिलासफर हो गए?

चन्दू—हाँ रीटा, तुम्हारी आँखों की नशीली किताब पढ़कर जैसे मेरा मन फिलासफी की तरफ दौड़ रहा है। जिनको बढ़-बढ़कर बातें करनी हों करें, दुनिया को बदलना हो बदले। ओह, कितना वक्त खराब हो गया! मेरी बहन की शकल पेट के अजीर्ण की तरह है, और तुम उनकी दवा की एक गोली। मेरी रानी, तुम्हारे पैरों की उँगलियाँ मैं अपनी तरफ मोड़ना चाहता हूँ।

रीटा—(हँसकर) यानी आँखें दूसरी तरफ? अच्छा मैं चली। शाम को मुझे अपनी माँ के साथ बाहर जाना है।

चन्दू—वचन दो।

रीटा—लेकिन······

चन्दू—लेकिन-वेकिन कुछ नहीं।

(रूपा का प्रवेश)

रूपा—बहन कामना ने पूछा है······

चन्दू—(झिड़ककर) क्या पूछा है? (नौकर घबड़ा जाता है।) बोल, बोलता क्यों नहीं। हमेशा आधी बात करेगा।

रीटा—जरा नरमी से पूछो। लगता है जैसे शेर के सामने आ गया हो। हाँ बोल क्या पूछा है बहन कामना ने। (नौकर नीची निगाह किये चुप रहता है।)

चन्दू—देखा रीटा, (रूपा से) बोल, बोलेगा नहीं, अबे उल्लू बोल क्या कहा है?

रूपा—(रीटा की तरफ़) किसी किताब की बाबत कह रही थीं। मुझे तो याद नहीं रहा। नाम भूल गया। (चुपचाप खिसक जाता है।)

चन्दू—देखा तुमने, है न बदतमीज? मेरे चारों ओर घूमेगा, छिप-छिपकर ताकेगा, जैसे मैं कोई चोर हूँ। पूरा जासूस है, जासूस।

रीटा—काफी खूबसूरत लड़का है।

चन्दू—रीझ गईं?

रीटा—हिश···जो जैसा है वैसा कहना ही पड़ता है। कहाँ का है?

चन्दू—(आसमान की तरफ देखता हुआ) अरे होगा कहीं का।

रीटा—बिलकुल औरतों जैसी सूरत है।

चन्दू—औरतों की सूरत क्या कोई खास होती है? (बाहर से आवाज आती है—चन्दू ओ चन्दू।)

चन्दू—(धीरे से) बाबा आवाज लगा रहे हैं।

रीटा—तो बोलो न, जवाब दो। (चन्दू ओ चन्दू बेटा, मेरी पगड़ी और चोगा धुले?)

चन्दू—कौन मुसीबत में पड़े।

(कामना का प्रवेश)

कामना—बाबा पुकार रहे हैं चन्दू। अरे रीटा, तुम अभी बैठी हो?

चन्दू—कह दो मैं थोड़ी देर में लाऊँगा।

कामना—उन्हें आज पहनना है।

चन्दू—कह तो रहा हूँ।

कामना—तो अभी कौनसा पहाड़ ढो रहे हो?

चन्दू—तुम्हीं ले आओ न? प्यारी बेटी हो बाबा की।

कामना—तुम शायद नहीं हो। लो, मैं जाती हूँ। (जाती है।)

चन्दू—रीटा फिर?

रीटा—तुम हिन्दू हो मैं ईसाई।

चन्दू—एव्री थिंग इज़ फेयर इन लॅव एण्ड वार, रीटा।

रीटा—फादर से पूछा?

चन्दू—डोण्ट बादर अबॉउट माई फादर। आई एम दी मास्टर ऑफ माई ओन।

रूपा—(प्रवेश करके) सरकार आ रहे हैं।

चन्दू—(अलग हटकर) थिंक ऑफ इट। डू हेल्प मी।

रीटा—मैं चली। (रीटा के जाने से पहले मनोहरसिंह आ जाता है। साठ का पाठा, तेजस्वी मुख, दाढ़ी और मूँछें ऊपर मुली हुई, लाल चेहरा, राजपूती ढंग की धोती, मलमल का कुरता, ऊपर बण्डी, पैर में चप्पल। आते ही तख्त पर बैठ जाता है। पीछे रूपा हुक्का लिये आता है।)

मनोहर—ठहरो। (रीटा रुक जाती है।) चन्दू, यह कौन है? (हुक्का गुड़गुड़ाता है।)

चन्दू—(दबी जबान से) मेरी क्लास-फैलो रीटा।

मनोहर—हूँ! (थोड़ी देर बाद) बैठ जाओ। (रीटा सलाम करके खड़ी रहती है।) तुम चन्दू की क्लास में पढ़ती हो, कैसा पढ़ता है? (रीटा चुप रहती है।) तुमने एक किस्सा सुना है चन्दू! एक रानी की डोली जा रही थी। पालकी से रानी का हाथ बाहर निकल आया। एक राजपूत सरदार ने जो डोली के साथ चल रहा था, रानी का

हाथ बाहर निकला देखकर जानते हो क्या किया ! (चन्दू चुप) क्या नाम बताया ?

रीटा—मेरा नाम रीटा है ।

मनोहर—मैं बताता हूँ । उस राजपूत ने यह कहकर उसका हाथ काट दिया कि अब यह हाथ हमारे राजा के काम का नहीं रहा । (हुक्का गुड़-गुड़ाता दोनों की तरफ देखता रहता है ।) रीटा हिन्दू नाम है ?

रीटा—मैं ईसाई हूँ ।

मनोहर—और तू इस घर में घुस आई ?

रीटा—मैं जाती हूँ । (चली जाती है । मनोहर तेज़ आँखों से उसका जाना देखता रहता है ।)

मनोहर—यह मैं क्या देख रहा हूँ चन्दू ? आदमी क्या मुर्गियों से ब्याह करेंगे, ठाकुर, राजपूत !

चन्दू—यह मेरा अपमान है ।

मनोहर—(कड़ककर) मेरा भी ।

चन्दू—मैं जाता हूँ ।

मनोहर—खबरदार जो बाहर क़दम रखा तो ।

चन्दू—आप मुझे रोक रखना चाहते हैं ?

मनोहर—रूपा थोड़ा गंगाजल लाकर कमरे में छिड़क दे । (रूपा जाता है ।) हाँ, अब कहो ।

चन्दू—दुनिया बहुत बदल गई है ।

मनोहर—शायद तुम्हारी आँखें भी ।

चन्दू—मेरी आँखें दुनिया के साथ हैं ।

मनोहर—इसलिए कि कमज़ोर हैं । हमारे बाप-दादा कमज़ोर नहीं थे ।

चन्दू—लेकिन आज सबके बाप-दादा कमज़ोर हो गए हैं ।

मनोहर—आँखें बन्द कर लेने पर सब जगह अँधेरा दीखता है बेटा ।

चन्दू—यह तो मुझे कहना चाहिए ।

मनोहर—मेरे कपड़े अभी धुलकर आ जाने चाहिए, जाओ। (जाता है।)

कामना—(प्रवेश करके) ये हैं आपके कपड़े।

मनोहर—तू गई थी बाहर, अकेली!

कामना—भैया रीटा से बात कर रहे थे।

मनोहर—गंगा जल नहीं छिड़का रे! (रूपा आकर गंगाजल छिड़कता है।)

कामना—यह क्या बाबा?

मनोहर—(उठकर बैठता हुआ) वह आई थी न।

कामना—पर हम उससे पहले मनुष्य हैं, समय……

मनोहर—समय कमजोरों के लिए बना है कामना। चन्दू गया! तू जानती है यह घर मेरा है, मेरे बाप-दादों का।

कामना—मैंने कई बार मना किया, पर वह नहीं मानता। (बूढ़ा गाव तकिये का सहारा छोड़कर धीरे-धीरे बैठ जाता है। फिर उठकर अलमारी में रखी तलवार निकाल लाता है। म्यान से निकालकर तलवार की धार पर हाथ फेरता है। फिर चूमकर, म्यान में तलवार रख देता है।)

मनोहर—कामना, इस तलवार की धार में जंग लग रहा है।

कामना—तीरों के बाद तलवार का युग भी बीत रहा है बाबा। शायद पिता को छोड़कर पुत्र का युग आ रहा है।

मनोहर—रूपा, मेरे कपड़े कमरे में ले चल। (और उसके साथ ही दाहिने कमरे में चला जाता है। रूपा लौट आता है। कामना किताब रखकर टहलने लगती है।)

रूपा—बाबा को बहुत दुख है। रीटा से और अच्छी नहीं हैं क्या? (कामना उसकी तरफ देखती है।) रूप की बात कर रहा हूँ।

कामना—(मुस्कराकर) तू भी रूप की बात जानता है? रूप का सम्बन्ध मन से है। तुझे कैसा लगा।

रूपा—(जरा रुककर) कुछ अच्छा तो नहीं। पर मैं कौन हूँ

सोचने वाला। बाबा कपड़े बदल रहे हैं, सवारी तो कोई है नहीं बाहर जाने के लिए।

[कामना कान में कुछ कहकर जाने लगती है।]

कामना—समझ गया ? मैं तब तक किताब खत्म करती हूँ।

[जाती है।]

रूपा—सुनिये ! जब से नौकरी पर आया हूँ तभी से देख रहा हूँ।

कामना—(लौटकर) क्या ?

रूपा—(मुस्कराता हुआ) आप जानती तो हैं।

कामना—मैं बीमार रहती हूँ रूपा।

रूपा—आप बीमार क्यों रहती हैं ?

कामना—(लम्बी साँस लेकर) बीमार हूँ, इसलिए बीमार रहती हूँ।

रूपा—(पास जाकर) आप इतना पढ़ती क्यों हैं ?

कामना—न पढ़ूँ तो मर जाऊँ।

रूपा—आप रानी बनने लायक हैं।

कामना—(मीठी झिड़की के साथ) राजा कोई नहीं है रे। बाबा आ रहे हैं। जैसा कहा है वैसा करना, हाँ। जा। (जाता है।) कितना सुन्दर है, कितना कोमल। लगता है जैसे इसके प्रति मेरे हृदय में कहीं कोई तन्तु जुड़ गया है। (चली जाती है। दूसरी ओर से मनोहरसिंह पूरे जमींदार के वेश में, हाथ में चमड़े से मढ़ा बेंत लिये बड़ी अकड़ के साथ कमरे में चक्कर लगाकर गाव तकिये के सहारे बैठ जाता है।)

मनोहर—(अकड़ के साथ) हूँ, कौन है बाहर ! (रूपा आता है।) हुक्का भर ला।

रूपा—जी।

मनोहर—और देख, बाहर जितने आसामी बैठे हैं, उनसे कह दे रुपये लेकर आवें। एक भी कम दिया तो खाल खींचकर भुस भरवा दूँगा सालों में।

[रूपा हुक्का मनोहर के सामने रख देता है ।]

रूपा—सरकार, आसामी फर्शी सलाम झुकाकर अर्ज करते हैं कि इस बार फसल कमजोर है, माफी की जाय, अगले साल कौड़ी-कौड़ी चुका देंगे, सरकार ।

मनोहर—(कड़ककर) माफी, कैसी माफी ? हर साल माफी ! अभी तो पार साल का लगान बाकी है । मैं एक पैसा नहीं छोड़ूँगा । सब सालों को जेल भेजकर रहूँगा । मुन्शी कहाँ है ? बुलाओ मुन्शी को । बदमाश हो गया है, वह भी । कभी पूरी वसूली नहीं करेगा, मेरी सारी रियाया को बरगला दिया है । कहाँ है मुन्शी ?

रूपा—मुन्शी जी गाँव से अभी नहीं लौटे हैं, सरकार ।

मनोहर—फिर मालगुजारी कहाँ से दी जायगी ! देखो जो पैसा न दें उनकी खड़ी फसलें कटवा दो, झोंपड़ियों में आग लगवा दो, जानवर छीन लो । रोने दो सालों को ।

रूपा—गरीब रियाया है, इस साल माफी दे दी जाय मालिक !

मनोहर—(गाव तकिये से उठकर बैठता हुआ, कड़ककर) कैसी माफी ? माफी क्या होती है, कोई माफी नहीं दी जा सकती । पकड़ लाओ सब सालों को, देखूँगा एक-एक को । इन शरकशों ने समझ क्या रखा है ! होगा तो भी न देंगे । कुटियों में अनाज भरे रहेंगे और पेट खाली दिखायेंगे । फटे कपड़े पहनकर जमींदार के सामने आएँगे, जैसे कभी कपड़ा पहनने को मिला न हो, जाओ कोई माफी नहीं दी जा सकती ।

रूपा—(बाहर से भीतर आकर) एक गरीब ब्राह्मण दरवाजे पर खड़ा है सरकार । कहता है मेरी लड़की का विवाह है, पैसा पास नहीं है ।

मनोहर—तो मैं क्या करूँ ? मेरे यहाँ कौन कुबेर का खजाना गड़ा है, कह दो भाग जाय ।

रूपा—कहे देता हूँ मालिक ! (चलने लगता है ।)

मनोहर—ठहर, महल में से सौ रुपये लाकर उसे दे दे । ब्राह्मण का खाली हाथ लौटना ठीक नहीं है । और देख किसी से कहना पैर दबा दे ।

रूपा—बहुत अच्छा !

[जाता है, घर का माली आकर अधलेटे मनोहर के पैर दबाने बैठ जाता है। मनोहर हुक्का पीता रहता है।]

रूपा—(आकर) बाई जी आई हैं।

मनोहर—इस समय, जा कह दे आज तबियत ठीक नहीं है, कल रात को आ जायँ, लोगों को बुलाकर मुजरा कराऊँगा। और देख तबले वाला करीम मेरे सामने न आये। मैं नूरी का तबला सुनूँगा। पूरी तैयारी हो। कलक्टर तहसीलदार और दरोगा को भी बुलाना होगा। खाने-पीने का भी इन्तजाम रखना। सुना कि नहीं ?

रूपा—जो आज्ञा।

मनोहर—क्यों बे घेरू, कहाँ रहा अब तक ? तुझे मालूम नहीं था सरकार दीवानखाने में आ गए हैं। साले खोदकर गड़वा दूँगा।

घेरू—(पैर दबाता हुआ) गलती हो गई हजूर, इस बार माफी दी जाय।

मनोहर—माफी ! माफी !! माफी !!! सब माफी माँगते हैं साले। (थोड़ी देर चुप रहकर) हाँ, जाते समय चार रोटी और गुड़ ले जाना भला ! जरा जोर से पैर दबा।

घेरू— (तेजी से) बहुत अच्छा, गरीब परवर !

मनोहर—क्या गरीब परवर, सरकार चाहती है, जमींदारों को चूस ले। चूसो बच्चू, हम भी तुम्हें लड़ाई में कोई मदद न देंगे। देखें, कैसे लड़ाई के लिए चन्दा माँगते हो। कैसे भरती के लिए हमारी रियाया को चाहते हो। तुम्हें एक भी आदमी मिल जाय तो मेरा नाम ठाकुर मनोहरसिंह नहीं ! (मूँछों पर ताव देता है।)

घेरू—आप मालिक हैं सरकार।

मनोहर—अबे, क्या मालिक हैं, कभी थे मालिक, जब सरकार की हर मशीन का पुर्जा हमारी ओर देखता था। हम न होते तो क्या अँग्रेजों के पाँव हिन्दुस्तान की जमीन पर जम सकते थे ?

रूपा—सरकार, पंडित जी चरणामृत लाये हैं।

मनोहर—हाँ ला, भगवान् का चरणामृत। **(हाथ में लेकर पीता है और भीगा हुआ हाथ सिर पर चढ़ाकर)** रूपा, पण्डितजी को दो सेर अनाज दिलवा दे। इस बार हम भी ठाठ-बाट से गंगा नहाने जायँगे, हमारा डेरा अलग रहेगा। गंगादीन पण्डित, खचेड़ू नाई, ननकू खवास, परमा हुक्का बरदार, सबसे कहो तैयार रहें। दोनों घोड़ियाँ, तीनों रथ, दो बहली, सब चलेंगे। गाड़ियों में सामान जायगा।

रूपा—ऐसा ही होगा मालिक, पर शिकार को बहुत दिन हो गए।

मनोहर—अरे हाँ, शिकार को भी जाना है। पिछली बार अपने गाँव के पिछवाड़े सुअर मारा। कछार में चीता न जाने कहाँ से आ गया था। हाँ भाई, गजेन्द्रसिंह, ज्वालासिंह, रणवीरसिंह आवें तब याद दिलाइयो, बात करेंगे।

रूपा—सरकार, सुना है जमींदारी जा रही है। जो आसामी दस गुना जमा कर देगा, जमीन उसी की हो जायगी।

मनोहर—**(तकिये का सहारा लेकर, दबी जबान से)** बुरा जमाना है रूपा, जमींदार खत्म हो रहा है, कहाँ है अब उसकी वह शान?

घेरू—सरकार, किसानों ने दस गुना लगान जमा कराना शुरू कर दिया है।

[नेपथ्य में कोलाहल]

मनोहर—**(आँखें बन्द करके फिर खोलकर)** यह कैसा शोर है?

रूपा—**(बाहर जाकर लौटता हुआ)** दस गुना जमा करके जो लौटे हैं, उन्हीं की आवाज है सरकार। खुश होकर गीत गा रहे हैं।

मनोहर—दरवाजा बन्द कर दे। भगा दे लोगों को, न भागें तो मेरी बन्दूक ला। एक-एक करके सब सुसरों को देख लूँगा। समझ क्या रखा है इन्होंने? एक-एक को कैद न करा दिया तो मेरा नाम ठाकुर मनोहरसिंह नहीं।

रूपा—कैद कौन करेगा मालिक? सरकार ही तो जमीन बाँट रही है।

मनोहर—(चुप रहने के बाद) हाँ रे हाँ, तू ठीक कह रहा है, अब जीना बेकार है। मुझे सहारा दे, मैं भीतर महल में जाऊँगा। हुकूमत के दिन गये।

रूपा—उठिये सरकार! (रूपा के कन्धे पर हाथ रखकर चला जाता है।)

कामना—(आती है।) भीतर गये बाबा?

घेरू—(खड़ा होकर) जी!

रूपा—(लौटकर) बिलकुल नया खेल है।

कामना—(उदासी से) नया नहीं है रूपा, बाबा को जब दौरा उठता है, तब यह सब भूल जाते हैं। मुझे किसी-न-किसी तरह इसे निभाना होता है।

रूपा—बाबा निढाल होकर लेट गए हैं।

कामना—उन्हें नहीं मालूम समय कितना बदल गया है।

रूपा—यदि ऐसा न करें तो?

कामना—धड़कन बन्द हो जाय। इसीलिए मैं यह स्वाँग रचती रहती हूँ।

[मनोहर एकदम बाहर आता है।]

मनोहर—यह क्या कामना, नौकरों में अदब कायदा कुछ भी नहीं रहा। ठूँठ की तरह खड़े हैं तेरे सामने।

कामना—झुककर जुहार करो रे बाबा को। (रूपा और घेरू जुहार करते हैं।)

मनोहर—तमीज सीखो नालायको, जमींदार अभी मर नहीं गया है। खून कर दूँगा खून। लाश कहीं ढूँढ़े भी नहीं मिलेगी।

दोनों—(झुककर) सरकार इस बार गुस्ताखी माफ हो।

मनोहर—शाबास, कामना, इनको एक-एक कुर्ता और एक-एक धोती बख्शीश में दी जाय। मैं ऐसे नौकर पसन्द करता हूँ।

कामना—ऐसा ही होगा बाबा, आप आराम कीजिए।

मनोहर—(जाते हुए, फिर लौटकर) जमींदारी गई तो गई, पर मैं अभी हूँ। मुझमें भी तो उन्हीं का खून है, जो जमींदार थे, जिन्होंने हिन्दुस्तान पर हुकूमत की। हुकूमत करना आसान नहीं है बेटी। (जाता है। फिर लौटकर) अरे तेरी आँखों में आँसू ? क्या हुआ बेटी ! उजड़ गए तो भी अभी बहुत कुछ है।

कामना—नहीं बाबा, मैं कहाँ रोती हूँ। यह तो वैसे ही हो गया था। आप आराम कीजिए।

मनोहर—हाँ, मैं आराम करूँगा। जमींदार को आराम जरूरी है। लेकिन कान खोलकर सुन लो। जमींदार न रहने से पहले मैं मर जाना पसन्द करूँगा समझे ! घेरू, जा खचेडू नाई को बुला ला उसीसे पैर दबवाऊँगा, तुझे तमीज नहीं है। पैर दबाना भी एक कला है। जा तब तक मैं भीतर आराम करता हूँ। (चला जाता है।)

[रूपा कामना की ओर देखता खड़ा रहता है। घेरू कोने में पड़ी खुरपी उठाकर बाहर निकल जाता है। कामना थोड़ी देर खड़ी रहने के बाद धम्म से कॉउच पर गिर पड़ती है। भीतर से आवाज आती है—जमींदार अभी मरा नहीं है कामना बेटी।]

कामना—(दोनों हाथों से आँखें बन्द करके) मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ बाबा, कि लाश अब जिन्दा नहीं हो सकती।

[पर्दा गिरता है।]

दूसरा दृश्य

[वही कमरा। कमरे में हल्का नीला बिजली का प्रकाश। गाव-तकिये का सहारा लिये कामना लेटी है। आधी देह रैपर से ढँकी हुई। पास ही मेज पर दवा की शीशियाँ। कमरे में इस समय कोई नहीं है। पास ही अखबार और कुछ किताबें पड़ी हैं। कामना पत्र पढ़ती हुई स्टेज की तरफ मुँह किये है। कभी-कभी लगता है किसी ध्यान में छत की

तरफ देखती है। फिर पत्र पढ़ती है। कलाई की घड़ी देखकर सामने रखे गिलास में दवाई डालकर पीती है। कड़वाहट से मुँह बनता है। एक गिलास में पानी डालकर चिलमची में कुल्ला करती है। रैपर कमर तक ओढ़कर तकिये का सहारा लेकर और फटी-फटी आँखों से छत और बाहर की तरफ ताकती है। समय रात के आठ बजे।]

कामना—(अपने-आप पढ़ती हुई) खूब लिखा है—'फ्रान्स में प्रेम-मिलन है, इंग्लैण्ड में वियोग, इटली में ऑपेरा, जर्मनी में मैलोड्रामा और हिन्दुस्तान में जैसे कोई माली दो जगह से दो पेड़ लाकर एक गमले में लगा दे। यहाँ प्रेम खंड काव्य है।' गलत बात है। हिन्दुस्तान में प्रेम अमर बेल की तरह है, जो हर आदमी पर ऊपर से आकर छा जाती है। धीरू की लिखावट मुझे पसन्द है। बुद्धि कांटे-सी नुकीली, लेकिन सूरत··· सूरत से नफरत ! तू आ गया रूपा !"

रूपा—बाबा सो रहे हैं।

कामना—और तू जाग रहा है ?

रूपा—सिर्फ आँखें खुली हैं।

कामना—शायद साँस भी बन्द हो गई है। धरती की तरफ क्या ताक रहा है, ऊपर देख !

रूपा—(आसमान की तरफ देखता है।)

कामना—क्या लिखा है आकाश में ? मेरी ओर देख न ! (रूपा कामना की ओर देखता है।) कुछ दिखाई दिया ? तू नहीं जान सकता ! कोई भी नहीं जान सकता ! मैं खुद नहीं जानती। मैं पागल हो जाऊँगी रूपा !

रूपा—शायद मन के समुद्र में तूफान उठ रहा है।

कामना—अनजान तूफान ! (रूपा की ओर देखती रहकर) कितनी पतली नाक है ! कलमी आम की फाँक-सी आँखें ! जा, तू यहाँ से चला जा। अब मत आना मेरे पास। मैं यह बरदाश्त नहीं कर सकती, जा।

रूपा—जी, जाता हूँ। (जाता है।)

[बाहर खट-खट की आवाज]

कामना—कौन है ? (इसी समय कोट पतलून पहने, टाई लगाये, बगल में टोप दबाये एक व्यक्ति आता है। व्यक्ति का रंग साँवला, मुँह पर चेचक के हल्के दाग, शरीर पुष्ट, आँखों पर चश्मा, चेहरे पर हँसी और नम्रता के चिह्न। उम्र लगभग २७-२८। नाम धीरेन्द्र, वैसे धीरू बाबू।)

धीरू—कैसी हो कामना ?

कामना—(निराशा से सहारा लेकर) जैसी मुझे होना चाहिए।

धीरू—(चुपचाप कुरसी पर बैठकर) हूँ, तुम्हें कैसी होना चाहिए ?

कामना—(हाथ पटककर) साँस गिन रही हूँ।

धीरू—अब तक कितनी गिनती हो चुकी, सुनूँ तो। छः-सात की संख्या से तो ऊपर ही पहुँच गई होगी ?

कामना—(छत की तरफ मुँह करके) मैं अच्छी न होऊँ तो ? (निराशा से) पर किसी के अच्छे होने या न होने पर दुनियाँ तो चलती ही रहेगी धीरू बाबू !

धीरू—(आगे की तरफ जरा झुककर) लेकिन दिन में रात सो जाती है।

कामना—तब रात में साँसें चलती हैं, सपने चलते हैं, चाँद सितारे, बचपन, जवानी, बुढ़ापा न जाने, क्या-क्या।

धीरू—शायद आजकल दर्शन-शास्त्र का अध्ययन हो रहा है ? कितनी किताबें पढ़ी जा चुकी हैं अभी तक ? सुनूँ तो !

कामना—जीवन निराश होने पर दर्शन-शास्त्र की बारी आती है शायद, तुम यह मानते होगे।

धीरू—चाहता तो हूँ कि मान लूँ।

कामना—जो मैं मानती हूँ, वह हर कोई कैसे मान सकता है, धीरू बाबू !

धीरू—तब तो ठीक है ! तुम्हें यह भ्रम है कि तुम बीमार हो जब कि तुम बिलकुल ठीक हो !

कामना—(मुस्कराकर) शायद तुम समझते हो कि मैं अपने को धोखा दे रही हूँ !

धीरू—'वन इज ईजिली फूल्ड बाई दैट विच वन लव्ज़ !'

कामना—अवर फर्स्ट लव एन्ड लास्ट लव इज़ सेल्फ लव !

धीरू—काश यह सच होता।

कामना—मेरे लिए तो यही सच है। दफ्तर से आ रहे हो।

धीरू—हाँ अक्सर रात हो जाती है।

कामना—ज्यादा काम रहता होगा ?

धीरू—अफसर लोग बैठे रहते हैं तो हमें भी बैठना पड़ता है ! मीटिंग्स होती रहती हैं।

कामना—स्वराज्य के बाद सबसे बड़ा काम मीटिंग हो गया है शायद ! कमेटी, सब-कमेटी, दौरा, रिपोर्ट····तो क्या जितना खर्च होता है, समय लगता है, उसके अनुसार काम भी होता है ?

धीरू—पिछले साल से फाइलों में वृद्धि तो जरूर हुई है यही क्या कम है ?

कामना—अच्छा है। मकानों की तंगी का खयाल दफ्तर में रहते हुए कम रहता होगा। फिर बच्चों की चिल्ल-पों से भी बचे रहने का मौका मिलता है।

धीरू—गरमियों में कूलिंग प्लांट, सरदियों में हीटर, सभी तो है।

कामना—देश की उन्नति के लिए यही उपाय क्या कम है ?

धीरू—उपाय तो और भी है, जैसे चाय के दौर।

कामना—तब तो देश की गरीबी काफी दूर हो रही है।

धीरू—निश्चय ही। हम तो दिल्ली के कनाट प्लेस, चाँदनी चौक में घूमने वाले लोगों को देखकर कह सकते हैं कि हमारा देश गरीब नहीं है। मोटर-टैक्सी, मोटर-रिक्शा की संख्या बढ़ गई है। हर दुकान पर

खचा-खच भीड़ है। मिठाई वालों, हलवाइयों, होटल-रेस्टोरेन्ट के कर्मचारियों को दम मारने की फुर्सत नहीं है।

कामना—तो क्या सारा देश दिल्ली ही है।

धीरू—नहीं नहीं बम्बई भी, कलकता भी, कानपुर भी, सभी बड़े शहर। लक-दक लोगों की भाग दौड़, खरीद-फरोख्त, हा हा हू हू और क्या चाहिए ? नाच-गाना, सिनेमा, नाटक !

कामना—और हमारे गाँव ?

धीरू—गाँव में लड़ाई-झगड़े। कचहरियों में कसा-कसी। लड़ाई अक्सर खुशहाल लोगों में ही तो होती है। भूखा क्या खाकर लड़ेगा कामना ?

कामना—(खिलखिलाकर हँसती हुई) अच्छा विश्लेषण है धीरू बाबू !

धीरू—गनीमत है तुम हँसी तो !

कामना—कमीशन कितना मिलता है ?

धीरू—पहले रायसाहब होते थे, राय बहादुर !

कामना—तुम्हारी वेश-भूषा तो पहली जैसी ही है।

धीरू—पिछली सरकार हमें जाते-जाते दो चीजें दे गई है। एक अंग्रेजी ड्रेस दूसरी अंग्रेजी बोली। (घूमता है।)

कामना—तो तुम अब तक वही चिपकाये फिर रहे हो !

धीरू—(सामने होकर) हम उन दोनों के गुणों पर हफ्तों व्याख्यान दे सकते हैं। (बैठता है।)

कामना—यानी ?

धीरू—यानी यह है कि इस भाषा के बगैर हमारा ज्ञान नहीं बढ़ सकता। इसीके सहारे हम ज्ञान में संसार के सामने खम ठोककर खड़े हो सकते हैं। और अँग्रेजी ड्रेस में कितनी इकानमी है, एक बार सिलाइये सौ बार पहनिये। फिर अच्छी भी लगती है।

कामना—(उठकर बैठती हुई) तो शायद इससे पहले हमारे देश

में न कोई भाषा थी न ड्रेस !

धीरू—इतिहास में मेरी कभी भी दिलचस्पी नहीं रही। मैं तो इतना जानता हूँ कि सरकारी नौकर मोम की नाक की तरह है। जब जिधर चाहे मोड़ दीजिए, मुड़ जायगी। उस दिन देशी पहनावे की उमंग में दफ्तर चला गया तो अफसर नाक-भौं सिकोड़कर बोला, "कम इन प्रॉपर ड्रेस प्लीज।"

कामना—तब तुमने ड्रेस बदल ली।

धीरू—एक दिन मैंने हिन्दी प्रेम में आकर, हिन्दी में हर बात का जवाब दिया तो साहब बोले, "स्पीक इन इंग्लिश।" एक बार जो नोट हिन्दी में लिख दिया तो आँखें तरेरकर साहब ने कहा, "हैव यू लास्ट योर सेंस आर व्हाट"। (घूमता है।)

कामना—यह कब तक रहेगा ?

धीरू—जब तक देश में सच्ची मानसिक दासता बनी रहेगी।

कामना—सुनती हूँ लोकगीतों और लोकनृत्यों के द्वारा हमारा देश उन्नति के शिखर पर पहुँच रहा है।

धीरू—शायद अब विश्वविद्यालय की पाठ्य-प्रणालियों में यह विषय आने वाला है कि प्रत्येक छात्र को नाचने-गाने की शिक्षा दी जाय। चाहिए तो यह कि अच्छे नाचने और गाने वालों को ही सरकारी नौकरी में रखा जाय।

कामना—हमारे देश का पूर्णोद्धार तो तभी होगा धीरू बाबू, और इसके बगैर हम उन्नति भी तो नहीं कर सकेंगे।

धीरू—निश्चय।

(रूपा चाय लेकर आता है। कामना अपने हाथ से चाय बनाकर धीरू को देती है।) क्या आप यहीं पड़ी-पड़ी सोचा करती हैं ?

कामना—पड़ी-पड़ी नहीं, रो-रोकर।

धीरू—तब तो आप बड़ी देश-भक्त हैं। (रुककर) कामना !

कामना—रुक क्यों गये !

धीरू—तुम जानती तो हो।

कामना—जो नहीं जानती हूँ वह भी क्या ?

धीरू—मैंने कहीं पढ़ा है स्त्रियाँ पुरुषों से ज़्यादा चतुर होती हैं।

कामना—और मैंने पढ़ा है कुछ लोग आवश्यकता से अधिक मूर्ख।

धीरू—(निष्प्रभ होकर फिर उत्तेजना पाकर) शायद प्यार में कह रही हो।

कामना—(खड़ी होकर) प्यार की परिभाषा मैंने नहीं पढ़ी। (थोड़ी देर बाद) मैं स्वयं मूर्ख हूँ, धीरू बाबू !

धीरू—(उसी स्वर में) मूर्ख हूँ मैं, जो बार-बार तुम्हारे पास आता हूँ।

कामना—यदि कुछ गाँठ का खोकर जाते हैं तब तो निस्सन्देह।

धीरू—(सँभलकर) यही तो मुश्किल है। हर बार आने पर तुम्हारी आँखों के उत्तप्त मद में सब-कुछ खो देता हूँ।

कामना—(गर्व का अनुभव करके) पर मुझे तो नहीं लगता।

धीरू—क्या नशा शराब को भी चढ़ता है ?

कामना—रूप की भूख शरीर की भूख हो सकती है, मन की नहीं।

धीरू—रूप के द्वारा ही मन तक पहुँचा जाता है कामना। (घूमता है, फिर सामने खड़ा होकर) तुम समझती हो मेरे अनुनय-विनय में शरीर की माँग है ?

कामना—(खड़ी होकर) यदि मैं भी रूप की माँग करूँ तो ?

धीरू—(चौंककर) मैं कुरूप हूँ।

कामना—यह मैंने कब कहा !

रूपा—(आगे आकर चाय के बरतन उठाता हुआ) कामना बहन, जूते की चमक और कला में क्या भेद है ?

धीरू—जूते की चमक स्वयं एक कला है।

रूपा—तो क्या रूप की नाप हमारे मन पर आधारित नहीं है ?

कामना—बस रे बस कर ! कहीं नजर न लग जाय।

धीरू—यह कौन है ?

कामना—हमारा नौकर। रूपा, तू आगे बढ़ रहा है।

रूपा—इसलिए कि आप पीछे जा रही हैं। धीरू बाबू, क्षमा कीजिए, मुझे नहीं बोलना चाहिए था।

धीरू—लेकिन तेरे बोलने ने मुझे मार्ग दिखा दिया। सुना है मंडन मिश्र के तोते भी वेदान्त की चर्चा किया करते थे। यह आज देखा।

कामना—(मुस्कराकर) क्या तुम्हारी सरकार के पास कोई खिताब नहीं है? अगर कोशिश कर दो तो मैं कृतज्ञ होऊँगी, धीरू बाबू?

धीरू—चन्द्रमा की कहानी मैंने पढ़ी है, लेकिन डर लगता है कभी पा भी सकूँगा।

कामना—फिर इतनी उछल-कूद व्यर्थ है। शाखा काफी ऊँची है, पतली भी।

धीरू—मुझे लगता है, गिलहरी पेड़ की चोटी पर चढ़कर सारे फल खा लेगी।

रूपा—लेकिन मैंने बच्चों को गिलहरी पर पत्थर फेंकते देखा है।

कामना—रूपा, देख मुझे जरा दवा तो दे दे।

[**रूपा शीशी से दवा उँडेलकर कामना को देता है।**]

जिसका जीवन दवा की सीढ़ियों के सहारे आशा के महल पर चढ़ रहा हो, वह किसी को क्या आश्वासन दे सकती है?

धीरू—तुम्हारी दवा ही तुम्हारा भ्रम है।

कामना—आपके लिए लड़कियों की कमी नहीं है। मेरा पीछा छोड़िए धीरू बाबू! (**रैपर ओढ़कर लेट जाती है।**)

[**मनोहर का झपाटे से प्रवेश**]

मनोहर—लेकिन मैं आसानी से पीछा छोड़ने वाला नहीं हूँ।

कामना—(**उठकर बैठती है।**) मैं आपको नहीं कह रही हूँ बाबा।

मनोहर—वह किसान का बच्चा मिटुआ जो कल तक मेरे तलुवे चाटता था, आज बुलाने पर उसने कह दिया, ठाकुर से कहना अब वे जमींदार नहीं हैं। मैं उनकी धौंस नहीं सुनूँगा। भला कोई बात है, साले

को खोदकर न गड़वा दिया तो मेरा नाम ठाकुर मनोहरसिंह नहीं।

कामना—तो आप मत बुलाइए।

मनोहर—न बुलाऊँ? यह कैसे हो सकता है? जमीन तो मेरी ही है न। सरकार ने उसे दे दी तो क्या हुआ? मैंने उस पर राज किया है। (चिल्लाकर) नहीं नहीं, यह कभी नहीं होने का। मैं उसका सिर फोड़ दूँगा, उसे मार डालूँगा। (सामने देखकर) ओह तुम धीरू, कहो कैसे हो?

धीरू—(खड़ा होकर) ठीक हूँ बाबा।

मनोहर—(अपनी ही धुन में) कभी-कभी मुझे लगता है मैं बीमार हूँ। पर कामना भी तो बीमार है। बीमार बीमार का इलाज कैसे कर सकता है?

धीरू—न आप बीमार हैं, न कामना।

मनोहर—क्या तुम्हारी सरकार में इतना अन्धेर है कि वह एक आदमी की रोजी छीन ले? उसके गौरव को भंग कर दे? बाप-दादों से चली आई उसकी सम्पत्ति को हड़प ले? अब तक बीसों आदमी जमींदार के सहारे पलते थे। आज वे भूखों मर रहे हैं। मेरी घोड़ियाँ, रथ, बहली, बैल, नौकर-चाकर सब अब क्या होंगे?

(चक्कर लगाकर घूमता हुआ) तुम दोनों साथ के पढ़े हो। तुम्हारे पिता मेरे पुराने मित्र। क्या कहती हो कामना?

कामना—मेरी चिन्ता क्यों करते हो बाबा। मैं थोड़े दिनों की मेहमान हूँ।

मनोहर—(फटी-फटी आँखों से अलमारी की तरफ देखता रहता है। धीरे से अलमारी में से बस्ता निकालकर) धीरू, ये हसनपुर के कागज हैं। बीसो बिस्वा हमारा गाँव था। उसके बाद सेठ छुंगामल से हमारे दादा ने १० हजार रुपये उधार लिये, हमारे विवाह के लिए। उसी में एक हिस्सा चला गया। वह रुपया आज तक न चुकाया जा सका। पर किसी ने वैसा ब्याह देखा क्या? एक हजार से ऊपर रथ और गाड़ियाँ

थीं। पाँच सौ घोड़े, पन्द्रह हाथी और पाँच हजार बराती। जब बरात पहुँची तो गाँव के बाहर बागों में ठहरी, बागों में। रात को मसालों के बीच चिम्मन बाई का मुजरा हुआ और आठ दिन तक बराबर होता रहा। दूर-पास सब जगह से कई रंडियाँ आईं। आसपास के गाँव के लोग कह उठे, ब्याह हो तो ऐसा हो। यह सारा हिसाब मुंशी भोलानाथ के हाथ का लिखा हुआ है। दो सौ तो नाई थे, तीन सौ कहार, छप्पन मशालची अलग से। (दूसरा कागज देखता हुआ) ये हथुआ गाँव की जमींदारी के कागज हैं।

कामना—जाने दो बाबा, अब इन कागजों में क्या रखा है ?

मनोहर—तू नहीं जानती मेरे बाप-दादों की सम्पत्ति है। बुजुर्गों की धरोहर है बेटी ! कल को सरकार बदल गई और उसने कहा जिनकी जो जमीन है, उन्हें लौटा दो, क्यों धीरू, फिर ये कागज-पट्टे-दस्तावेज काम आयेंगे।

कामना—(मुस्कराकर) ठीक है बाबा !

मनोहर—धीरू, तुम कब तक तहसीलदार हो रहे हो बेटा ? जल्दी बनो।

धीरू—मैं तो दफ्तर का क्लर्क हूँ बाबा। वह तो लाइन ही दूसरी है बाबा।

मनोहर—जैसे गाड़ी एक लाइन से दूसरी पर जाती है, वैसे ही तुम भी जा सकते हो।

कामना—धीरू बाबू की गाड़ी छोटी लाइन की है, वह बड़ी लाइन पर कैसे चल सकेगी ?

मनोहर—(सोचता हुआ) फिर किसी और को देखना होगा। मैं ही अपने चन्दू को तहसीलदार बनवाऊँगा। तब एक-एक को देखूँगा, चमड़ी न उधेड़ दी तो कहना। (जाता है।)

धीरू—बड़े दुखी हैं बाबा।

कामना—इस दुख में ही उनका सुख है धीरू बाबू। जैसे अफीमची

उसके बिना जी नहीं सकता, इसी तरह जमींदारी का स्वप्न ये नहीं छोड़ सकते। जैसे मन के प्रत्येक चेतन-खण्ड में यही स्वप्न भर गया हो।

धीरू—(सोचता हुआ) मन की प्रवृत्तियों को बदलना होगा।

कामना—ऐसे लोगों का और कोई इलाज नहीं है शायद !

धीरू—हुकूमत उनका स्वभाव बन गया है।

कामना—स्वभाव परिस्थिति के झटके से छिन्न-भिन्न होता है।

धीरू—समय लगेगा। तुम भी अपने को बदलो कामना, यह कमजोरी है।

कामना—मैं अवसर की प्रतीक्षा में हूँ।

धीरू—अवसर की प्रतीक्षा भाग्यवादी करता है।

कामना—शायद अवसर ही भाग्य है।

धीरू—तुम्हारी बीमारी ही जैसे तुम्हारा सुख है। अच्छा नमस्कार।

कामना—नमस्कार। (उठकर खड़ी होती है। धीरू चला जाता है।)

कामना—(स्वगत) क्या करूँ, कुछ भी अच्छा नहीं लगता। धीरू अच्छा है, लेकिन मैं इसे प्यार नहीं कर सकती। (देखती है जैसे परदे पर प्रतिछाया आ गई है।)

छाया—क्यों ?

कामना—क्यों क्या ! जैसा चाहती हूँ वैसा वह नहीं है।

छाया—पढ़ा लिखा समझदार। मनुष्य का रूप नहीं देखा जाता बावली, मन देखा जाता है। और राजेश्वर, वह तो सुन्दर है। तुझे चाहता भी है, सम्पन्न भी है, सुरुचिपूर्ण भी।

कामना—नहीं-नहीं, वह भी नहीं। उसकी सुन्दरता मुझे अच्छी नहीं लगती।

छाया—उसमें आकर्षण है, आँखों में मद है।

कामना—मुझे वह आकृष्ट नहीं कर पाता। जैसे अफीमची को शराब अच्छी नहीं लगती।

छाया—फिर ?

कामना—मुझे कोई भी अच्छा नहीं लगता। लेकिन मेरे जी में आता है, मुझे कोई अच्छा लगे। कोई मुझे चाहे और मैं उसको चाहूँ।

छाया—यही तेरी बीमारी है।

कामना—बीमारी! बीमारी मेरा सहारा है। नहीं तो बाबा अब तक मुझे किसी-न-किसी के साथ बाँध देते। मैं बँधना नहीं चाहती। केवल प्यार चाहती हूँ।

छाया—जो तू चाहती है, वह क्या मिलता नहीं है?

कामना—मेरी कामना से दूर।

छाया—कह, कह, कह डाल न! मैं जानती हूँ तू क्या चाहती है। पर तेरा सूत्र पकड़ में नहीं आता, जैसे तूने उसे अपने अवचेतन मन में छिपा रखा हो। एक बार मुझे झाँक लेने दे न।

कामना—नहीं वह मेरे भीतर के कोने की गहराई से चिपक रहा है।

छाया—उसे वाणी दे दे।

कामना—ऐसा क्यों करूँ? वाणी देने का अर्थ है तुझे बतला देना। वह एक धुँधली इच्छा है।

छाया—तू चन्दू को चाहती है?

कामना—छिः क्या कह दिया?

छाया—बाबा को।

कामना—चुप रह, पर बाबा मुझे प्रिय लगते हैं, पर क्या कह गई, उनकी आँखें उनका चेहरा, वैसा ही चेहरा!

छाया—यह रूपा?

कामना—रूपा भी बुरा नहीं है। सब जगह घूमने पर अगर मेरा मन कहीं अटकता है तो यहीं।

छाया—मैं समझ गई। प्यार के लिए तुझे एक विशेष आकृति चाहिए। एक खास तरह की आँखें, पितृवंश के रूप की चाह, यही न्यूरॉसिस है। इसी को एलैक्ट्राकाम्प्लेक्स कहते है।[१]

१. ग्रीस नाटकों में एलेक्ट्रा नाम की लड़की ने अपने पिता यूरी पिडास

कामना—बाबा जैसा रूप, रंग, आँखें।

छाया—रूपा का नाम क्यों नहीं लेती ?

कामना—बुरा नहीं है। जब से आया है, मुझे खींच रहा है। पर यह नहीं हो सकता। यह सब मैं नहीं चाह सकती। ऐसा कभी नहीं कर सकूँगी। मैं पागल हो जाऊँगी। (धम्म से तख्त पर बैठकर गाव तकिये का सहारा लेती है। आँखें फाड़कर छत की तरफ देखती रहती है।) यही वे आँखें हैं, यही चेहरा। (पुकारकर) रूपा, मुझे दवा दे दे, नींद की दवा, मुझे नींद नहीं आ रही है, मैं बहुत बेचैन हूँ।

रूपा—(प्रवेश करके) अभी तो आप किसी से बातें कर रही थीं।

कामना—(चौंककर) नहीं तो, नहीं तो।

रूपा—(दवा देता हुआ) मैंने सुना, आप बोल रही थीं।

कामना—(दवा पीती हुई) मैंने तो नहीं सुना। मैं बहुत थक गई हूँ। (कामना दवा पीकर सो जाती है। स्टेज पर थोड़ी देर तक चुप्पी। रूपा खड़ा-खड़ा कामना को देखता रहता है और चादर से उसके शरीर को ढँक देता है। इसी बीच में कभी कामना के चेहरे पर उत्तेजना के चिह्न, कभी मुस्कराहट, कभी गम्भीरता प्रकट होती रहती है। इसी समय एकदम बड़बड़ाती हुई) नहीं, ऐसा नहीं हो सकता, ऐसा नहीं हो सकता।

[रूपा कामना के माथे पर हाथ फेरने लगता है।]

रूपा—तुम कितनी सुन्दर हो और कितनी उदार! (इसी समय नशे में धुत्त चन्दू कमरे में चुपचाप प्रवेश करता है। उसके सिर से खून बह रहा है। सामने रूपा को देखकर क्रोध में भर जाता है।)

चन्दू—हूँ……तो यह बात है। कामना को प्यार किया जा रहा है? (धीरे-धीरे आगे सरकता है। रूपा चौंककर पीछे हटता है। पर पीछे हटने की जगह नहीं है। मुक्का तानकर) तभी मैं कहूँ, आखिर क्या बात

के पत्नी के द्वारा मारे जाने पर माँ से बदला लिया। माँ को यह सह्य न था कि लड़की अपने पिता को प्यार करे।

है। जुगनू सूरज की किरणों को पाना चाहता है। ले....(और इसके साथ ही तड़ाक-तड़ाक पाँच-छः थप्पड़ जमा देता है। रूपा के मुँह से एक भी शब्द नहीं निकलता। वह पिटता रहता है। कामना एकदम जागकर चिल्लाने लगती है।)

कामना—क्या करते हो चन्दू, क्या करते हो ? छोड़ो इसे।

चन्दू—(पीटता हुआ) ले और ले, और प्यार कर। (दोनों बेदम होकर नीचे गिर जाते हैं।)

कामना—प्यार, कैसा प्यार ! क्या हुआ, चन्दू घायल...खून.... (झपटकर मनोहर प्रवेश करता है।)

मनोहर—क्या बात है; अरे चन्दू गिर पड़ा ? खून....(कामना और मनोहर स्तब्ध से खड़े हैं। रूपा सुबक रहा है। चन्दू के माथे से खून बहता रहता है।)

[पर्दा गिरता है।]

तीसरा दृश्य

[११ फरवरी, समय प्रातःकाल ८ बजे। चन्दू चुपचाप तख्त पर लेटा है। सिर में पट्टी बँधी है। तख्त के साथ मेज़ पर दवा की शीशी। कमरे की स्थिति वही। रीटा धीरे-धीरे आती है और पास खड़ी हो जाती है। आँख बन्द किये चन्दू पूछता है।]

चन्दू—कौन ?

रीटा—मैं हूँ रीटा। कैसी तबियत है ?

चन्दू—ठीक है। तुम क्यों आई ?

रीटा—(थोड़ी देर चुप्पी) मुझे अफसोस है जोजॅफ़ ने तुम्हें चोट पहुँचाई।

चन्दू—जो कुछ कमी रह गई उसे शायद तुम पूरा करने आई हो।

रीटा—तुम्हें भ्रम है।

चन्दू—था, अब नहीं। आज मेरी बन्द आँखें भी खुल गई हैं।

रीटा—मैं नहीं चाहती थी ऐसा हो।

चन्दू—तुम न चाहतीं तो न होता, पर यह सब तुम्हारे चाहने पर ही तो हुआ है।

रीटा—वह रुपया माँग रहा है।

चन्दू—मेरे पास नहीं है।

रीटा—फिर ?

चन्दू—(चिल्लाकर) फिर क्या, कचहरी में इसका फैसला होगा।

रीटा—सबूत ?

चन्दू—तुम झूठ बोलोगी ?

रीटा—वह तो मुझे मजबूर होकर बोलना पड़ेगा।

चन्दू—तुम तो धर्म में विश्वास करती हो, सच्ची ईसाई हो।

रीटा—पर मैं अपने एक भाई को फँसने नहीं दे सकती। चाहती हूँ आपस में फैसला हो जाय। तुम रुपया दे दो।

चन्दू—मुझे नहीं मालूम था तुम डाकुओं के दल की सरदार हो।

रीटा—(चिल्लाकर) चन्दू, होश में बात करो, तुम एक भद्र महिला के सामने···

चन्दू—(उसी स्वर में) भद्र महिला ? तुम और भद्र महिला ? खूब है तुम्हारा यह रूप, डाकू, नीच लुटेरी, तुमने मुझे लूट लिया। मैं तुम्हारी बातों में आ गया। तुम्हारे ही कहने से घर का गहना चुराकर ढाई सौ में बेचा, शराब पिलाकर जुए के बहाने वह सब रुपया तुमने अपने दोस्तों के जरिये ऐंठ लिया। मेरी अँगूठी छीन ली और क्या चाहती हो ?

रीटा—मैंने तुमसे जुआ खेलने को कहा था ?

चन्दू—(उठकर) तुमने, हाँ तुमने ! (लेट जाता है।)

रीटा—तुम झूठ बोलते हो।

चन्दू—(उठकर) मैं झूठ बोलता हूँ ? (दाँत किचकिचाकर) मैं

झूठ बोलता हूँ, और तुम···राक्षसी, चली जा मेरे सामने से !

रीटा—रुपया दे दो मैं चली जाऊँगी।

चन्दू—(लेटकर) नहीं है मेरे पास रुपया। जा काला मुँह कर, नहीं तो···

रीटा—अभी कुछ नहीं बिगड़ा चन्दू, तुम्हारा बाहर निकलना बन्द हो जायगा। तुम जोजॅफ़ को जानते नहीं हो। खैर, फिर भी जो कुछ उसने कहा है, वही तुमसे कहे देती हूँ कि उसके जैसा गुण्डा इस शहर में दूसरा नहीं है। चाहे तो वह तुम्हारे बाप और कामना को उड़ा ले जा सकता है और पता भी न लगे। अगर तुम भलाई चाहते हो तो उसका रुपया दे दो। यही उसने दहाड़ते हुए सवेरे मुझसे कहा। वह खुद आना चाहता था, लेकिन मैंने ही उसे रोक दिया।

चन्दू—मैंने बड़े-बड़े बदमाश देखे हैं। वह तो मैं तुम्हारे चक्कर में····

रीटा—लेकिन जोजॅफ़ जैसा नहीं देखा होगा। वह आदमी नहीं है। खून कर देना उसके बाएँ हाथ का खेल है। गनीमत समझो, कल उसने तुम्हें छोड़ दिया। मैं बीच में न पड़ती तो····

चन्दू—तुमने झाँसा देकर मुझे लुटवा दिया, मेरा सब-कुछ छीन लिया, और क्या चाहती हो ? काश ! मैं तुम्हारा यह रूप पहले देख पाता।

रीटा—काश, तुम मेरा दिल देख पाते।

चन्दू—वही तो मैं नहीं देख पाया।

रीटा—मेरा मतलब है····

चन्दू—मैं तुम्हारा मतलब खूब जानता हूँ। तुम नागिन हो।

रीटा—मैं तुम्हें प्यार करती हूँ चन्दू !

चन्दू—और मैं नफरत, मुझे छोड़ो।

रीटा—रुपया तो तुम्हें देना ही होगा।

चन्दू—सब लूटकर भी क्या तुम्हारा पेट नहीं भरा ?

रीटा—तुम मुझे ग़लत समझते हो।

चन्दू—(उठकर) तुम ठीक कह रही हो, मैंने तुम्हें ग़लत समझा। तुम्हारे रूप पर मुग्ध होकर मैंने तुमसे शादी करना चाहा, तुम्हारे पीछे भौंरे की तरह मँडराता रहा और तुम गिरह लगाती गईं, मुझे फाँसती गईं। तुम्हीं ने मुझे रुपया न होने पर घर का गहना बेचने की प्रेरणा दी। शराब पिलाई। जुआ खिलाकर सब छीन लिया। सिर्फ पचास रुपये रह गए जो सब हारने के कारण मैं तुम्हें न दे सका। उसी के लिए तुम आई हो। मैं कुछ भी न जान सका। शराब के नशे में बढ़ावा दिया। मुझे जोजॅफ़ से लड़वा दिया और जब मैं उस पर टूट पड़ा उस समय तुम्हारे बाप और भाई ने मुझे पकड़ लिया और जोजॅफ को मुझे पीटने दिया। (लेट जाता है।)

रीटा—इस सबके लिए मुझे बहुत अफसोस है, पर उसमें ग़लती तुम्हारी भी थी। तुम जोजॅफ़ से लड़ पड़े। हम लोग उसे जानते हैं, वह मशहूर बदमाश है, उसके रुपये उसे दे दो।

चन्दू—मेरे पास नहीं हैं।

रीटा—किसी से उधार ले लो। तुम उसे नहीं जानते। उसने कहा है आज दोपहर तक रुपया न मिला तो मैं तुम्हारे बाप का और कामना का खून कर दूँगा।

चन्दू—मैं पुलिस में खबर कर दूँगा। तुम सबको•••

रीटा—वह पुलिस से नहीं डरता, वह किसी से भी नहीं डरता। मैं चाहती हूँ, झगड़ा न बढ़े।

चन्दू—(चुप रहकर) तुम तो मुझे चाहती हो, तुम्हीं दे दो।

रीटा—रुपया मेरे पास नहीं है। पचास रुपये की क्या बात है। किसी भी सामान के बदले पचास रुपया मिल सकता है।

चन्दू—यानी ?

रीटा—तुम्हारे बाबा का हुक्का। मेरे फादर को वह बहुत पसन्द है। या कामना के इयररिंग, वह मैं अपनी माँ से कहकर खरीद लूँगी। इस समय घर में कोई नहीं है, कहो तो भीतर••••••

चन्दू—(कड़ककर) नहीं।

रीटा—तो मैं जोजॅफ़ को भेजे देती हूँ। खुद निबट लेगा। (चलने लगती है।)

चन्दू—ठहरो।

रीटा—(लौटकर) जल्दी करो, मुझे कॉलेज जाना है।

चन्दू—कॉलेज ! (हँसकर) यही सीखा है तुमने कॉलेज में, यही सीखा है !···रुपया मेरे पास नहीं है, जोजॅफ़ से कहो मुझे माफ कर दे।

रीटा—वह माफ करना नहीं जानता।

चन्दू—फिर मैं क्या कर सकता हूँ ?

रीटा—तुम जो कुछ समझो। मैं जाती हूँ, जोजॅफ़ खुद निबट लेगा।

चन्दू—नहीं, वह राक्षस है, दैत्य है, मैं उसकी सूरत नहीं देखना चाहता।

रीटा—(चिल्लाकर) मुझे परेशान मत करो। जल्दी रुपया नहीं दे सकते तो शाम तक मरने के लिए तैयार हो जाओ।

चन्दू—पचास रुपये के पीछे वह मेरा खून कर देगा ?

रीटा—वह दस रुपये भी किसी पर नहीं छोड़ता। एक बार पुलिस के दरोगा को उसने अपनी लूट में रुपये नहीं दिए। दरोगा ने डाँटकर सब छीन लिया तो उसने वहीं उसकी गर्दन मरोड़ दी।

चन्दू—क्या उसे मार डाला ?

रीटा—वहाँ काफी आदमी थे, लेकिन डर के मारे कोई न कुसका। न किसी ने आगे बढ़ने की कोशिश की।

चन्दू—लेकिन मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ कि मेरे पास एक भी पैसा नहीं है। बाबा जब गहने की बात जानेंगे तो क्या कहेंगे ? कामना क्या कहेगी ? मैं कैसे अपने को बचाऊँगा ?

रीटा—मुझे देर हो रही है चन्द्र, मैं रुक नहीं सकती। मैं चाहती थी कि तुम्हें मुसीबत में न पड़ना पड़े। (चलती हुई रुककर) एक बात कहूँ ?

चन्दू—कहो !

रीटा—ये अपना सूट दे दो। मैं कह दूँगी, यही है उस बेचारे के पास, उसे माफ कर दो।

चन्दू—मैं क्या नंगा फिरूँगा ? यों ही दो सूट हैं मेरे पास।

रीटा—(चिल्लाकर) सूट क्या जिन्दगी से बढ़कर है चन्द्र ?

चन्दू—(चुप रहता है।)

रीटा—क्या कहते हो ? जल्दी करो।

चन्दू—(मरी आवाज में) अच्छा मेरा सूट ले लो।

रीटा—(कागज जेब से निकालकर) इस पर लिख दो कि यह सूट जोजॅफ़ का है, मेरा नहीं।

चन्दू—मैं नहीं लिखूँगा।

रीटा—तुम्हें लिखना पड़ेगा, लो लिखो।

चन्दू—चोरी और सीनाजोरी ?

रीटा—मेरे चन्द्र, तुम कितने अच्छे हो, लो लिखो। (कागज-कलम देती है। चन्दू लिखता है कि रूपा आ जाता है।)

रूपा—ठहरिए, चन्दू बाबू, ये लीजिए रुपये।

चन्दू—रूपा !

रूपा—हाँ, मैंने सब सुन लिया है। जॉर्जफ़ को रुपया दे दीजिए, लो रीटा, रुपया लो। (देता है।)

रीटा—(रुपया लेकर) अच्छा मैं चली। चीरियो, फिर मिलूँगी। (जाती है।)

चन्दू—(चिल्लाकर) नहीं, अब आने की जरूरत नहीं। जा, काला मुंह कर। रूपा, तूने मेरे प्राण बचा लिए। ये रुपये ?

रूपा—मेरे पास थे चन्दू बाबू।

चन्दू—तू कितना अच्छा है !

रूपा—लाइये, आपके माथे की पट्टी कस दूँ, ढीली हो गई है।

चन्दू—मेरे सिर में बहुत दर्द है।

रूपा—मैं दवाई देता हूँ। पट्टी कसकर बाँध दूँ। (पट्टी बाँधता है।)

चन्दू—(उसके हाथ पर हाथ फेरकर) कितने कोमल हाथ हैं !

रूपा—(मजाक में) क्या रीटा के हाथों से भी ?

चन्दू—वह डाकू है, राक्षसी, उसका नाम न ले मेरे सामने। राक्षसी ।

[मनोहरसिंह का प्रवेश]

मनोहर—वह फिर आई इस घर में । रूपा, जरा गंगाजल लाकर छिड़क तो दे कमरे में । सारा कमरा खराब कर दिया ।

चन्दू—हाँ रूपा, सचमुच उसने मेरा कमरा अपवित्र कर दिया ।

मनोहर—यह चोट कैसे लग गई ? क्या शिकार को गया था ? शिकार में कभी-कभी चोट लग जाती है । एक बार मेरा हाथ रीछ के मुँह में आ गया तो मैंने सीधे हाथ से तानकर भाला मारा, उसके पेट में आधा घुस गया । साला वहीं ढेर हो गया । सुना है बड़े-बड़े जमींदार मिलकर एक मुकदमा दायर कर रहे हैं सरकार पर, कि उसे जमींदारों की जमीन छीनने का कोई अधिकार नहीं है । मैं भी उसमें शामिल हो जाऊँगा । मेरे पास पुराने पट्टे हैं जिनसे साबित होगा ये जमीनें पुराने राजाओं ने हमें मुफ्त में नहीं दी हैं । हमने उनकी मदद की है—रुपये से, तलवार से और आदमियों से ।

चन्दू—लेकिन जितनी जमीन हमें सरकार ने दी है उसी पर हम खेती करें तो भी हमारा काम चल सकता है बाबा ।

मनोहर—यानी ?

चन्दू—मैंने निश्चय किया है, मैं खेती करूँगा ।

मनोहर—सो तो ठीक है, पर तू····तू क्या हल उठाएगा ? जमींदार का लड़का होकर हल चलाएगा ?

चन्दू—सभी कर रहे हैं, मैं भी करूँगा ।

मनोहर—गलत बात है । तलवार पकड़ने वाले हाथों में हल ? मेरे जीते-जी ऐसा नहीं हो सकता ।

चन्दू—जो हाथ तलवार उठा सकते हैं वे हल क्यों नहीं उठा सकते ?

मनोहर—यह नीच काम है, हम हकूमत करने के लिए पैदा हुए हैं

बेटा।

चन्दू—कोई भी काम नीचा नहीं है। गाँधीजी तो अपने हाथ से दूसरों का पाखाना तक साफ करते थे।

मनोहर—गाँधी जी ? नहीं नहीं, किसी ने वैसे ही उड़ा दिया होगा।

चन्दू—आपको नहीं मालूम, यह जमाना सब काम अपने हाथों से करने का है। कोई ऊँचा-नीचा नहीं है।

मनोहर—लेकिन मुझे उनसे मिलना है जो सरकार पर हमारी तरफ से दावा दायर करने जा रहे हैं। देखूँ, विक्रमसिंह को बुलाकर बात करूँ, क्या कहता है। (चला जाता है।)

चन्दू—आज तूने मुझे मुसीबत से बचा लिया रूपा ! कहाँ से आये ये रुपये तेरे पास ?

रूपा—मेरे पास थे। रुपये ऐसे काम के लिए ही तो होते हैं।

चन्दू—क्या तूने मेरी और रीटा की बातें सुनीं ? मेरे सिर पर हाथ फेर रूपा, शायद कुछ आराम मिले।

रूपा—(बालों में हाथ फेरता हुआ) आखिरी बातें सुनीं।

चन्दू—मुझे दुःख है, मैंने तुझे कई बार पीटा।

रूपा—हाँ बाबू !

चन्दू—क्या ?

रूपा—कुछ नहीं, जो नौकरी करेगा वह पिटेगा भी।

चन्दू—लेकिन आज तूने जैसा काम किया है वैसा तो अपना सगा भाई भी नहीं कर सकता।

रूपा—(अपने में खोया हुआ-सा) हाँ !

चन्दू—हाँ क्या ?

रूपा—कुछ नहीं !

चन्दू—तेरे हाथ बड़े मुलायम हैं।

रूपा—हाँ।

चन्दू—हाँ क्या ? (चौंकता है।)

रूपा—(भर्राई आवाज) कुछ नहीं।

चन्दू—(घबराकर उठ बैठता है।) तू रो रहा है ?

रूपा—(चुप)

चन्दू—क्या बात है ?

रूपा—(आँसू पोंछकर, मुस्कराता हुआ) कुछ नहीं !

चन्दू—कुछ तो, ये आँसू क्यों ? कितना सुन्दर मुख है तेरा ! सच बता।

रूपा—कुछ नहीं। (हटकर खड़ा हो जाता है।)

चन्दू—तू रो क्यों रहा था ?

रूपा—(मुस्कराकर) रुलाई आ गई।

चन्दू—अपने-आप ? (रूपा का हाथ अपने हाथ में लेता है।)

रूपा—आपको चोट जो लग गई।

चन्दू—तो क्या हुआ, ठीक हो जायगी, पगला, इतना हल्का जी लेकर नौकरी करने चला है ?

(नेपथ्य से आवाज आती है—रूपा, रूपा ! रूपा हाथ हटाकर)

रूपा—कामना बहन बुला रही हैं। मैं जाता हूँ।

चन्दू—(उठकर टहलता हुआ) यह कौन है ? इसकी सूरत लड़कों जैसी नहीं है। कोमल उँगलियाँ, मुलायम हाथ, आकर्षक चेहरा, मोहक मधुर ! मेरे सिर में चोट लगी तो देखकर रो पड़ा। लेकिन लड़के क्या ऐसे नहीं हो सकते ? हो सकता है किसी अच्छे कुल का हो। मजबूर होकर नौकरी करने आ गया हो। (सोचकर) नौकरी तो सभी कर सकते है ! (घड़ी नौ बजाती है।) नौ बज गए, मुझे आदमी बनना होगा। रीटा का भीतरी रूप यह है, खूब रहा, नया अनुभव मिला, नई सीख मिली। नौ बज गए, (हाथ मसलकर) देखूँ, जोजॅफ से बदला लेना चाहता हूँ, उस बदमाश जोजॅफ से ! कहीं अकेले मिल भर जाय। (रूपा का प्रवेश) तू आ गया रूपा ?

रूपा—जी !

चन्दू—मेरे जूते उठा ला, मैं बाहर जाऊँगा।

रूपा—बाहर ? अभी लाता हूँ। (बढ़ता है।)

चन्दू—ठहर, क्या तू मेरे जूते उठाएगा ? नहीं, मैं अपना काम खुद करूँगा। तू एक पहेली है रूपा। इससे पहले तू कहाँ था ?

रूपा—घर पर।

चन्दू—घर पर ? ओह सिर दर्द कर रहा है, लेकिन मुझे जाना होगा।

रूपा—रहने दीजिए, बाहर मत जाइए।

चन्दू—नहीं, मैं जाऊँगा, मैं जाऊँगा। (रूपा को देखता हुआ चला जाता है।)

[रूपा सामान ठीक करता हुआ धीरे-धीरे गाता है।]

रूपा—मन होता है नाचूँ गाऊँ।

पवन पंख पर थिरक उठूँ मैं चन्दा को छू आऊँ !
किरण परी हँसती आती है
जी की जी में रह जाती है
तू भी आ, ओ मेरे सपने मैं तुझमें मिल जाऊँ !
मन होता है नाचूँ गाऊँ !
सिमट रहा मेरा अपनापन
फूट रहा प्राणों में कंपन
पैंठ, अधमुँदी मद पलकों में यौवन रास रचाऊँ !
मन होता है नाचूँ गाऊँ !

कामना—(प्रवेश करके) बड़ा मीठा स्वर है रूपा, खूब गाता है।

रूपा—(शर्माकर) यों ही काम करते-करते जी ऊब गया तो...

कामना जी ऊबने पर भी कभी-कभी गाना अच्छा लगता है। हाँ एक बार और गा न।

रूपा—मैं गाना क्या जानूँ कामना बहन।

कामना—कितना कोमल स्वर है, कितना मधुर, कितना लोचभरा !

हाँ, एक बार और गा न !

मनोहर—(चिल्लाता हुआ प्रवेश करता है ।) चन्दू कहाँ है ? कहाँ है चन्दू ? सुना है जोज़ॅफ़ नाम के किसी आदमी से उसकी लड़ाई हो गई ।

कामना—(चौंककर) जोज़ॅफ़ ! जोज़ॅफ़ कौन ? रात भी वह किसी से लड़कर आया था ।

मनोहर—(हड़बड़ाकर) मैंने अभी सुना है, कामना ।

रूपा—मैं जानता हूँ । वे जुए में रुपये हार गए; मैं अभी जाता हूँ । मैं······(भाग जाता है ।)

मनोहर—क्या ? जुआ, कैसा जुआ ? मैं कुछ भी नहीं समझा ।

कामना—शायद रीटा का काम होगा । मैं देखती हूँ बाबा, मैं देखती हूँ । (तेज़ी से निकल जाती है ।)

मनोहर—(हैरान होकर) सब गये ? बिना किसी आदमी के, बिना सवारी के, मैं कैसे जाऊँ ? जमींदारी गई तो क्या मैं पैदल चलूँगा, क्या करूँ, कैसे करूँ ? ओः ! (हाथ मसलता है ।)

[पर्दा गिरता है ।]

द्वितीय अंक

प्रथम दृश्य

[वही कमरा। दिन के बारह बजे। ११ फरवरी। चन्दू तख्त पर लेटा है। उसके पास कामना बैठी है। सामने मनोहरसिंह बेचैनी से टहल रहा है। डाक्टर इंजेक्शन देने के बाद]

डाक्टर—चिन्ता की कोई बात नहीं है, ठीक हो जायगा। लड़के हैं लड़ पड़े होंगे।

कामना—(बेचैनी से) चोट तो नहीं लगी ?

डाक्टर—भीतर कोई चोट नहीं। इंजेक्शन से ताकत आएगी। घबराने की कोई बात नहीं। मैं नुस्खा लिखता हूँ, आध-आध घण्टे बाद दीजिए। अभी आराम आ जायगा।

मनोहर—तो कोई खास बात नहीं है ?

डाक्टर—नहीं। बस, आराम की जरूरत है। दवा मँगा लीजिए। पीने को दूध दीजिए गरम गरम ! (जाता है।)

मनोहर—रूपा को भेज दो, दवा ले आएगा।

कामना—रूपा नहीं है, न जाने कहाँ चला गया ? मैं जाती हूँ। (उठने लगती है।)

मनोहर—तुम यहीं बैठो बेटी, घेरू माली को भेज दो।

कामना—वह कुछ नहीं जानता। मैं जाती हूँ, आप बैठिए। (जाने लगती है।)

मनोहर—तू भी तो बीमार है कामना, तू भी तो बीमार है। मैं ही

जाता हूँ। मैं······(रुककर) जमींदार क्या बाजार में पैदल चलेगा, अकेला !

कामना—नहीं आप बैठिए, मैं जाती हूँ। (**चली जाती है।**)

मनोहर—गई, अकेली गई। यह भी कभी हुआ कि लड़कियाँ अकेली बाहर निकलीं ! जैसे आकाश धरती पर आ गया हो। घास-फूस में फूल निकल रहे हों मेरे अहंकार को नाग के फन की तरह कुचला जा रहा है। चन्दू सो गया। सोने दो। इसे आराम की जरूरत है। (**पर्दे पर एक छाया मूर्ति उभरती दिखाई देती है।**)

छाया—जमाना बदल रहा है मनोहरसिंह !

मनोहर—(**छाया के सामने होकर**) जमाना ? जमाना क्या चीज है ? न इसके हाथ हैं, न पैर। न यह आदमी है न जानवर, क्या है आखिर यह ? कोई भी तो नहीं, कुछ भी तो नहीं।

छाया—फिर भी यह बहुत तेज दौड़ता है, बड़ा बलवान है। इसके सामने कोई नहीं टहर सकता।

मनोहर—पर यह है कौन ? कहाँ है, दिखाई भी तो नहीं देता।

छाया—यह जमींदार जो टूट रहा है, ये सिंहासन जो उजड़ रहे हैं, ये राज जो उखड़ रहे हैं, यह ऊँच-नीच, जिसकी कड़ियाँ चटक रही हैं, ये आदमी जो बराबरी का दावा लेकर दौड़ रहे हैं, प्रत्येक मनुष्य में एक नई चेतना आ रही है, नये विचार उठ रहे हैं, यही जमाना है, तुम्हारे बचपन को जिसने जवानी में बदल दिया, जवानी को बुढ़ापे में, बुढ़ापे को मौत के मुँह में जो डाल रहा है, वही।

मनोहर—वह तो मैं हूँ, मैं !

छाया—तुम नहीं हो, वह है। तुम भुनगे की तरह हो, जो समय की आग में जल जाता है। वह एक हवा है। हवा का रुख, जिससे विचार बदलते हैं, विचारों से आदमी। आदमी से समाज, समाज से देश, देश से राष्ट्र। समझे ?

मनोहर—मेरी कुछ भी समझ में नहीं आया। मैं कुछ भी जानना

नहीं चाहता। (टहलता है।)

छाया—तो तुम कुचले जाओगे, बाँस की सीढ़ी के निचले डण्डे टूट चुके हैं, एक-एक करके। सिंहासनों के पाँव चचरा उठे हैं। उतरो उससे, नहीं तो मुँह के बल गिर पड़ोगे।

मनोहर—(रुककर) मैं ऊपर चढ़ा हुआ हूँ। मुझे तो दिखाई नहीं देता।

छाया—तुम अभिमान की, गर्व की, कुलीनता की और वंश की सीढ़ी पर चढ़े हुए हो, उतर आओ।

मनोहर—सब व्यर्थ की बकवास है, मैं खत्म नहीं हो सकता। जमींदारी खत्म नहीं हो सकती।

छाया—वह तो कभी की खत्म हो गई। लोग पैदल चलने लगे हैं। बराबर-बराबर कदम बढ़ाकर।

मनोहर—(घबराकर) हैं, क्या कहा?

छाया—हम ठीक कह रहे हैं।

मनोहर—कुछ-कुछ दीख तो यही रहा है। पर मैं पैदल कैसे चलूँ? अकेला कैसे घूमूँ? अपने-आप अपना काम कैसे करूँ? क्या मुझे कपड़े अपने-आप पहनने होंगे? अपने हाथ से काम करना होगा? गलत बात है। यह कभी नहीं हो सकता। (टहलने लगता है।)

छाया—जो नहीं हो सकता वह हो रहा है। जो नहीं देखा वह दिखाई दे रहा है। (मनोहर घूमता रहता है।) यह कामना जैसी लड़की क्या पालकी की सवारी के बिना बाहर निकली है?

मनोहर—जैसे अब उसे कोई डर नहीं रहा है।

छाया—तुम्हारा कोई आसामी बुलाने पर न आया हो, ऐसा कभी हुआ है?

मनोहर—पहले हुक्म मिलने पर कब्र में से उठकर आते थे।

छाया—तुम्हारी जमीन जोतने पर भी अब वह तुम्हारी ओर देखता तक नहीं है।

मनोहर—तुम ठीक कहते हो।

छाया—अपने को बदलो। जमींदारी जाने पर भी जो तुम उसके पीछे पागल हो, उसे छोड़ दो, जैसे फटे कपड़ों को उतारकर लोग फेंक देते हैं।

मनोहर—(हँसकर) फटे कपड़े ? जमींदारी फटे कपड़े की तरह है ?

छाया—हाँ, जमींदारी और इसी तरह की कुछ बातें फटे कपड़े की तरह हैं।

मनोहर—क्या मैं बूढ़ा हो गया हूँ ?

छाया—तुम मन से बूढ़े हो गए हो। मन को ठीक करो, बुढ़ापा ठीक हो जायगा। शरीर से बूढ़ा होना स्वाभाविक है, पर मन की बुढ़ौती घातक है। समय की दाढ़ें बड़ी तेज हैं, उनसे कोई नहीं बच सका। उन्होंने आज पहाड़ को धूल बना दिया है, और धूल को पहाड़।

मनोहर—मन को फेंक दूँ निकालकर, क्या करूँ ?

छाया—मन को समय के विवेक के ढाँचे में ढालते चलो, तुम कभी नहीं पछताओगे। (छाया लोप हो जाती है।)

मनोहर—यह मैं क्या सुन रहा था ? कौन था यह, किसने कहा ? ऐं, सुनो ! कहीं भी कोई नहीं है। यह क्या हुआ ? जैसे मैं सपना देख रहा हूँ। मन को समय के ढाँचे में ढालते चलो, तुम कभी नहीं पछताओगे ! समय की दाढ़ें बड़ी तेज हैं, उनसे कोई नहीं बच सका। उन्होंने आज पहाड़ को धूल बना दिया है और धूल को पहाड़। **(मनोहर की आँखों में एक चमक आ जाती है और वह घूमता रहता है।)**

चन्दू—बाबा, बाबा, पानी !

मनोहर—हाँ बेटा, डाक्टर ने दूध कहा है, दूध लाता हूँ।

[चला जाता है, दूध लेकर आता है।]

[इसी बीच चन्दू करवट बदलता हुआ देखता है।]

चन्दू—अब तबियत ठीक हो रही है। मैंने जोजफ से बदला ले लिया है। वह भी क्या याद करेगा !

मनोहर—लो बेटा चन्दू, पियो !

चन्दू—(दूध पीता हुआ) कामना कहाँ है ? रूपा कहाँ गया ?

मनोहर—दवा लेने गई है, अभी आती है। रूपा तभी से बाहर है, न जाने कहाँ चला गया। आ जायगा, और न भी आएगा तो मैं तो हूँ।

चन्दू—मैं कुल्ला करूँगा।

मनोहर—मैं चिलमची लाता हूँ। उठना नहीं! (उठाकर देता है।)

चन्दू—हैं, आप चिलमची उठाएँगे ? रहने दीजिए, मैं खुद उठा लूँगा।

मनोहर— (चिलमची लेता हुआ) क्या हुआ, अब मैं वह मनोहर सिंह नहीं हूँ चन्दू।

चन्दू—(हैरानी से) यानी ?

मनोहर—कुछ नहीं, तुम आराम करो। [कामना आती है।] आ गई बेटी ?

कामना—हाँ, दवा ले आई। पहली खुराक दे दूँ। चन्दू, कैसी तबियत है ?

चन्दू—हाँ, दर्द है जरा-जरा !

[कामना दवा पिलाती है। मनोहर अलमारी से कागज निकाल-कर बाहर फेंकता है। दोनों देखते हैं।]

कामना—यह क्या कर रहे हैं बाबा ?

[मनोहर अपनी धुन में फाड़ता हुआ फेंकता है।]

कामना—यह क्या कर रहे हैं ?

मनोहर—अब इनकी कोई जरूरत नहीं है। फिजूल हैं।

कामना—(आगे जाकर रोकती हुई) ठहरिए !

मनोहर—(उसी धुन में) कामना, ये सब व्यर्थ हैं, पुरानी बीमारी के कीड़े। इन्हें घर में रखने से बीमारी बढ़ती है। (सब कूड़ा अपने हाथों उठाकर बाहर लेकर चला जाता है। फिर झाड़ू लाकर सफाई करने लगता है।)

कामना—(मनोहर के हाथ से झाड़ू छीनकर) रहने दीजिए, मैं

किये देती हूँ।

मनोहर—हाँ, एक भी व्यर्थ का कागज न रहे। आज घेरू नहीं आया क्या ?

कामना—नहीं।

[मनोहर बाहर चला जाता है।]

कामना—(पुनः) क्या हुआ आज बाबा को ?

चन्दू—अभी जब तुम दवा लेने गईं थीं तब अपने आप बात कर रहे थे।

कामना—क्या ?

चन्दू—पूरा तो मुझे याद नहीं। शायद कुछ अच्छी बातें थीं। मैं तो नींद के झोंके में था। (रूपा आता है।) कहाँ गया था रे ?

कामना—देख तो, चन्दू भइया को चोट लग गई।

रूपा—मुझे एक बहुत जरूरी काम लग गया था।

कामना—(तेजी से) क्या काम था ? ऐसे ही समय तुझे काम लगता है ? हाँफ रहा है, बैठ जा, मैं आई। (जाती है।)

रूपा—(जेब से नोट निकालकर) ये लीजिए अपने दो सौ पचास रुपये।

चन्दू—(हैरान होकर) कहाँ से लाया ?

रूपा—लेटे रहिये चन्दू बाबू, जोजॅफ से जीतकर लाया हूँ। वह भी क्या याद रखेगा, कोई मिला था।

चन्दू—(उत्सुकता से) कैसे, कैसे रूपा ?

रूपा—जोजॅफ को ढूँढ़ते-ढूँढते पता लगा कि एक जगह बैठा जुआ खेल रहा है। मैं वहीं पहुँच गया। मैंने भी खेलना शुरू कर दिया। पहले तो हारा, फिर जीता तो सब झाड़ लिया, और शराब की बोतल लाने के बहाने मैं भाग आया।

चन्दू—तू और जुआ ?

रूपा—मैंने जुआरियों के यहाँ भी नौकरी की है। शराब लाकर देता

था उन्हें। फिर मुझे खुद ही इस काम से नफरत हो गई।

चन्दू—(शान्ति की साँस लेकर) मुझे इन रुपयों की बड़ी चिन्ता थी। मैं समझ नहीं पा रहा था कि क्या करूँ। रूपा, तूने मुझे नई जिन्दगी दी, यह मैं कभी नहीं भूलूँगा।

रूपा—आप मुझे लज्जित न करें।

चन्दू—नहीं रूपा, तू नौकर नहीं है, इतना बड़ा काम कोई नौकर नहीं कर सकता। तू मेरा भाई है। मैं तुझे पाकर धन्य हो गया! काश, तू···

रूपा—आप कैसी बातें कर रहे हैं!

चन्दू—कभी-कभी मुझे लगता है तू······

रूपा—(चुप)

चन्दू—(रूपा को पास खींचकर) मुझे आज न जाने कैसा लग रहा है।

रूपा—हाथ छोड़ दीजिए। कोई देखेगा तो!

चन्दू—औरतों की तरह क्यों शरमा रहा है?

रूपा—मैं जाता हूँ।

कामना—(दूर से पुकारती हुई) चन्दू, चन्दू! बाबा क्यारियों में पानी दे रहे हैं।

रूपा—(उठता हुआ) मैं चलूँ, बाबा क्यारियों में पानी दे रहे हैं।

कामना—(प्रवेश करके) मैंने मना किया तो बोले, काम ही कितना है बेटी, हर आदमी को कुछ-न-कुछ करते रहना चाहिए। अब मैं अपने हाथों बगीचे में पानी दूँगा, सफाई रखूँगा। आज ही बाजार से बीज लाकर कुछ साग-भाजी बो देना चाहता हूँ। घेरू को हटा दो। कह रहे थे 'अब गायों का काम भी मैं करूँगा।'

चन्दू—कितना बड़ा परिवर्तन है!

कामना—यह भीतर से हुआ है चन्दू, भीतर से।

चन्दू—मैं भी खुद-काश्त करने वाला हूँ कामना। पढ़ाई छोड़कर गाँव में ही रहूँगा, कामना!

कामना—दवाई ली?

चन्दू—(हँसकर) तुम्हीं तो दे गई थी। याद नहीं रहा? लेकिन मैं ठीक हूँ। (उठता है।)

कामना—अभी और आराम करो चन्दू, डाक्टर ने कहा है।

चन्दू—मैं ठीक हूँ, फिर भी कहोगी तो शाम तक पड़ा रहूँगा। बर्ट्रेण्ड रसल ने कहा है कि 'जिन्दगी में आराम करना भी जरूरी है।'

कामना—ज़्यादा आराम अल्पायु को बुलाना है।

चन्दू—और कम आराम जल्दी मौत बुलाना।

कामना—मैंने बीमार बनकर ज़्यादा आराम किया है। अब नहीं करूँगी। चन्दू, यह लड़ाई की क्या बात थी? बाबा भी परेशान थे। सुना तुम जुआ खेले। मनोरमा ने सुना तो दो बार देखने आई।

चन्दू—मैंने तो नहीं देखा।

कामना—बाहर से तो उसने मुझसे इधर-उधर की बातें करनी चाहीं, पर भीतर-ही-भीतर तुम्हारा हाल जानने के लिए बेचैन थी। मैंने उसे बताया तो बोली—देख लूँ क्या? मैंने जवाब दिया, चल मैं दिखा दूँ। पर बाबा को देखकर लौट गई।

चन्दू—(सोचकर) स्वाभाविक है।

कामना—जैसे तुमने अपने गाने की कला से उसे मुग्ध कर दिया है।

चन्दू—तो क्या मेरा गाना उसे पसन्द है?

कामना—गाना तो कोई भी पसन्द कर सकता है, पर कवि-हृदय के लिए तो वह प्राण है।

चन्दू—अच्छा लिखती है। उस दिन कालेज में मैंने उसीका बनाया गीत तो गाया था। मुझे काफी लज्जित होना पड़ा। लोगों के सामने अब भी कभी-कभी गुनगुनाने को जी किया करता है। अच्छा गीत है।

कामना—वह भीतर-ही-भीतर तुम्हारा गीत गाती रहती है।

चन्दू—व्यंग्य करना तो कोई तुमसे सीखे !

कामना—सच कह रही हूँ चन्दू ।

चन्दू—मैं कब झूठ मानता हूँ ।

कामना—चाहती हूँ कि····कम-से-कम उस रीटा से तो····

चन्दू—उसका नाम मत लो मेरे सामने ।

कामना—सुना, तुम जुआ खेले और लड़ पड़े ।

चन्दू—बिलकुल ग़लत बात है । ऐसे ही दो आदमी लड़ रहे थे, मैंने बीच-बचाव किया तो चपेट में आ गया, चोट लग गई । सिर अभी भारी है ।

कामना—लाओ मैं दबा दूँ ।

चन्दू—नहीं रूपा दबा देगा, तुम क्यों कष्ट करोगी ।

कामना—क्या हर्ज है ! (आगे बढ़ती है ।)

चन्दू—नहीं रूपा को भेज दो, वही दबा देगा ।

कामना मैं भेजती हूँ । उसका काम मैं कर लूँगी । आज मैं खुद कमरे साफ करूँगी । (जाती है ।)

चन्दू—(अपने-आप) मुझे लगता है यह रूपा एक रहस्य है । निश्चय ही यह लड़का नहीं है । और हो भी तो कौन जाने ! कभी-कभी लगता है जैसे यह दूसरी कामना है । (सोचकर) मैं भी क्या कह गया ? इतना होशियार, लगता है जैसे मुझे भीतर-ही-भीतर चाहता है, तभी तो इतना संकट झेलकर मेरे रुपये लौटा लाया । इतनी बार पिटा, पर उफ तक नहीं की, बोला तक नहीं । कभी-कभी अच्छे घर के लड़कों को भी नौकरी करनी पड़ती है । शायद, शायद······

[रूपा चुपचाप आकर खड़ा हो जाता है ।]

चन्दू—(पीछे की तरफ देखकर) तू कब से था ?

रूपा—अभी आया हूँ । सिर में दर्द है न, लाइये दबा दूँ ।

चन्दू—सिर दर्द एक बहाना था रूपा !

रूपा—फिर ?

चन्दू—तू मेरे पास बैठ। बता तू कौन है, तेरे माँ-बाप का क्या नाम है। (हाथ से पकड़कर उसे अपने पास तख्त पर बैठा लेता है।) तू काँप क्यों रहा है ?

रूपा—नहीं तो····(पीछे हटता है।)

चन्दू—तेरा सारा शरीर तिजारी के बुखार की तरह काँप रहा है। तू हर वक्त यह पगड़ी क्यों बाँधे रहता है ? हटा इसे, मुझे अपना सुन्दर मुख देखने दे।

रूपा—(घबराकर) नहीं नहीं, ऐसा न कीजिए, ऐसा न कीजिए चन्दू बाबू !

[चन्दू मना करने पर भी पगड़ी खींच लेता है। रूपा की पगड़ी खुल जाती है। चन्दू हैरान होकर देखता है कि रूपा के सिर पर लड़कियों की तरह जूड़ा है। 'रूपा' उछलकर दूर हट जाता है और पगड़ी बाँधने लगता है।]

चन्दू—लड़की !

रूपा—मैं सिक्ख हूँ।

चन्दू—सिक्ख।

[पर्दा गिर जाता है।]

दूसरा दृश्य

[दिन के दो बजे, ११ फरवरी। रूपा उसी कमरे की सफाई कर रहा है। रुक-रुककर झाड़ू लगाते हुए सोचता है।]

रूपा—(अपने आप) बड़ी विचित्र बात है, न जाने मुझे क्या हो गया है ! चन्दू को मालूम हो गया कि मैं लड़की हूँ। अब इस घर में मैं नहीं रह सकती। वह रीटा का सारा प्रेम मेरे ऊपर उड़ेल देना चाहता है। (झाड़ू लगाना रोककर) चन्दू मुझे चाहता है, कामना मुझे चाहती है।

पर मैं क्या चाहती हूँ ? मेरे मन में एक परिवर्तन हो रहा है, मैं बदल रही हूँ। धीरू, कामना, चन्दू ! पर मैं तो नौकर हूँ, इस घर की नौकरानी। (झाड़ू लगाती है।) किन्तु कामना को यह नहीं मालूम। मैं चाहती हूँ उसे न मालूम हो और मैं यहाँ से चली जाऊँ, मैं आसमान छूना चाहती हूँ, गड़रिया की लड़की। लड़का होकर मैंने नौकरी की। (शीशे में देखकर) बिलकुल आदमी हूँ, लड़का ! (धीरे-धीरे कामना आती है।)

कामना—रूपा, रूपा, काम कर लिया ? अच्छा, अपनी शकल देखी जा रही थी शीशे में !

रूपा—(लजाकर) जी, अलमारी साफ कर रहा था।

कामना—(तख्त पर बैठकर रूपा की ओर देखती हुई) बाबा हुक्का भरने के लिए बुला रहे हैं, जाओ। उन्हें तुम्हारा भरा हुक्का पसन्द है। कहते हैं हुक्का तो रूपा भरता है।

रूपा—(अपने में खोया हुआ-सा) हूँ !

कामना—(झिड़ककर) ठहरो, आज मन कहीं और लगा है ?

रूपा—क्या हुआ ?

कामना—रीटा की याद आ रही है।

रूपा—नहीं तो।

कामना—तो फिर कोई और याद सता रही होगी ?

रूपा—मैं नहीं समझा कामना बीबी !

कामना—मुझे बीबी मत कहो, मैं क्या तुम्हारी बीबी हूँ ?

रूपा—मेरा मतलब······

कामना—तुम्हारा मतलब मैं जानती हूँ। तुम जिस थाली में खाओगे उसी में छेद करोगे।

रूपा—आप नाराज हैं ?

कामना—सख्त परेशान कर रखा है। न दिन चैन, न रात चैन।

रूपा—(खड़ा होकर) तो मुझे छुट्टी दे दीजिए। मैं खुद छुट्टी चाहता हूँ।

कामना—(बनावटी रोब से) छुट्टी दे दीजिए, छुट्टी दे दीजिए, किस बात की छुट्टी ? काम ही तुम्हें यहाँ क्या करना पड़ता है ? कौनसा पहाड़ ढोते हो रोज ? कोई काम भी तो हो ! (**रूपा काऊच झाड़ता रहता है। उसकी आँखों में आँसू भर आते हैं। अपनी ही धुन में।**) मैं कुछ नहीं कहती तो इसका······(**देखकर**) अरे, रो रहे हो ? (**पास जाकर**) लाओ, मैं आँसू पोंछ दूँ । (**आगे बढ़ती है। रूपा अपनी आँखों पर हाथ रख लेता है। कामना हाथ छुड़ाती है।**) क्या मैं तुम्हारा इतना काम भी नहीं कर सकती रूपा ? मुझे तुम्हारे ऊपर इतना भी अधिकार नहीं है ?

रूपा—(**कामना को विह्वल देखकर मुस्कराता है।**) मैं कहाँ रो रहा हूँ।

कामना—मेरी आँखों से देखो, रो रहे हो या नहीं। पर मैंने कहा क्या है ? (**आँखों में आँसू भर आते हैं । तख्त पर गुमसुम बैठ जाती है। रूपा देखता है और काम छोड़कर पास जा खड़ा होता है।**)

रूपा—मुझे क्षमा कर दीजिए।

कामना—(**रूपा की ओर कनखियों से देखकर**) जाओ, तुमने मुझे रुला दिया।

रूपा—लाइये, मैं आपके आँसू पोंछ देता हूँ। (**पर खड़ा रहता है।**)

कामना—खड़े क्या देख रहे हो ? जाओ अपना काम करो । (**जाने लगता है।**) कहाँ जाते हो ?

रूपा—बाबा का हुक्का भरने।

कामना—कहाँ हैं बाबा, वे बाहर चले गए हैं।

रूपा—आपने ही कहा था बाबा बुला रहे हैं।

कामना—मैंने कहा था तो इसका मतलब यह तो नहीं था कि अभी चले जाओ, इसी वक्त चले जाओ।

रूपा—मैं मूर्ख आदमी ठहरा, कामना बीबी !

कामना—फिर तुमने बीबी कहा ? क्या मैं तुम्हारी बीबी हूँ, औरत ?

रूपा—आज आपको क्या हो गया है ?

कामना—मेरा मन बेचैन है रूपा, रातों नींद नहीं आती।

रूपा—दवा लीजिए।

कामना—हर बीमारी की दवा क्या इन शीशियों में भरी है ?

रूपा—जैसा कहिये ?

कामना—मैं कुछ नहीं जानती। (लेट जाती है।) ओफ़ क्या करूँ, कुछ भी समझ में नहीं आता।

रूपा—बहुत-सी बातें ऐसी होती हैं जो समझ में नहीं आतीं।

कामना—(तनुककर) क्या तुम्हारी भी ?

रूपा—किसी की भी !

कामना—लगता है जैसे मैं पागल हो जाऊँगी।

रूपा—कभी-कभी ऐसा भी लगता है।

कामना—यानी ?

रूपा—यानी यह कि कभी-कभी पागल हो जाने को जी किया करता है।

कामना—(उठकर) बिना पागलपन के भी ?

रूपा—पागलपन शुरू हो या न हो, फिर भी लगता है।

कामना—जैसे तुम सब जानते हो।

रूपा—मैं जानता हुआ भी कुछ नहीं जानता।

कामना—तो तुम जानते हो कि मुझे क्या बीमारी है ?

रूपा—बीमारी शायद न समझ सकूँ, पर इतना कह सकता हूँ कि आपको बीमारी है।

कामना—(तड़ककर) तुम मूर्ख-बुद्धिमान् हो।

रूपा—मूर्ख नाम से सम्बोधन करके आप मुझे बुद्धिमान् बना रही हैं। मैं अवश्य ही वैसा हूँ !

कामना—तो क्या मेरी आँखों में आँसू आये देखकर भी तुम्हें कुछ नहीं हुआ !

रूपा—हुआ, उस समय मैं मूर्ख था।

कामना—और अब ?

रूपा—मुझे लग रहा है कि अब मैं बुद्धिमान् हो गया हूँ !

कामना—(हँसकर)इतनी जल्दी ! तब तो तुम मेरी बीमारी···

रूपा—जान सका हूँ कि आपको क्या बीमारी है।

कामना—क्या, भला बताओ तो।

रूपा—यह बीमारी बताने से बढ़ती है, कामना जी।

कामना—तुम बड़े चालाक हो। भला बताओ, वसन्त में भौंरे गूँज कर क्या गाते हैं ?

रूपा—खेद है, उनके भाषा-शास्त्र में मेरा प्रवेश नहीं हुआ, फिर भी इतना कह सकता हूँ कि जो वे गाते हैं वह मैं नहीं गा सकता।

कामना—और आदमी का भाषा-शास्त्र ?

रूपा—किसी और का नहीं, आपका जानता हूँ।

कामना—तो फिर बताओ।

रूपा—आपको दिल की बीमारी है, दिमाग पर छा गई है।

कामना—इलाज ?

रूपा—इलाज है। (रुककर) धीरू बाबू।

कामना—(कड़ककर) मैं उसे नहीं चाहती।

रूपा—जिसे आप चाहती हैं वह मूर्ख है, अयोग्य है।

कामना—(आगे बढ़कर) जो अपने को अयोग्य कहता है, उसमें योग्यता होती है, रूप बाबू !

चन्दू—(प्रवेश करता है।) रूप बाबू ? यह रूपा क्या आज बाबू बन गया कामना ?

कामना—(घबराकर) चन्दू, यह मूर्ख है।

चन्दू—शायद मूर्ख को 'बाबू' कहकर पुकारा जाता है।

कामना—मूर्ख को 'मूर्ख' कहकर पुकारना तो मूर्खता है न !

चन्दू—वही तुम कर रही थीं, क्यों ? पर मैं मूर्ख नहीं हूँ। मैं जल्दी

ही एक लड़के को लड़की बनाकर उससे शादी करने जा रहा हूँ। तैयारी करो।

कामना—रीटा के काम क्या लड़कों जैसे हैं?

चन्दू—रीटा लड़की की शक्ल में धूर्त्त लड़का है। धूर्त्त, मैं उससे नफरत करता हूँ।

कामना—जहाँ प्रेम होता है वहाँ नफरत भी होती है। नफरत फिर प्रेम में बदल जाती है।

चन्दू—'नफरत' रहकर नहीं कामना। मैंने फैसला कर लिया है।

कामना—हम भी तो सुनें, कौन भाग्यशाली है वह।

चन्दू—भाग्यशाली वह नहीं 'मैं' हूँ। उसको पहचानने में देर लगी।

कामना—तो मैं बाबा से कह दूँ?

चन्दू—मैंने कह दिया है। सुना तो उछल पड़े, जैसे बिच्छू ने डंक मारा हो। हैरानी और गुस्से से आँखें लाल हो गईं, पर मेरी जिद्द देखकर मान गए। अब प्रसन्न हैं।

कामना—मैं बताऊँ, मनोरमा।

चन्दू—वह घर में ही है कामना!

कामना—क्या मतलब?

चन्दू—(रूपा की तरफ इशारा करके) यह।

कामना—(चौंककर) क्या पागल हो गए हो चन्दू! रूपा से ब्याह करोगे!

चन्दू—रूपा लड़का नहीं है कामना! (दौड़कर उसकी पगड़ी उतार देता है। कामना पर जैसे वज्र गिर गया हो। रूपा चुपचाप खड़ी रहती है।) कितनी सुन्दर है, देखा!

कामना—यह मैं क्या देख रही हूँ! (फटी-फटी आँखों से खोई हुई-सी देखती रहती है।)

चन्दू—चलो रूपा, हम तैयारी करें। (दोनों चलने लगते हैं।)

कामना—ठहरो, एक नौकरानी से जमींदार का लड़का शादी

करेगा ?

चन्दू—तो एक नौकर से जमींदार की लड़की शादी करना चाहती थी अब तक ?

कामना—झूठ है ।

चन्दू—पर अब यह सच होकर रहेगा । मैं जात-पात नहीं मानता । अगर मैं गीटा से शादी कर सकता था तो इससे क्यों नहीं ? जमाना बदल गया है, कामना ।

कामना—लोग आगे से नौकर रखते हुए डरा करेंगे ।

चन्दू—सब मनुष्य बराबर हैं, कोई छोटा-बड़ा नहीं है । मैंने अच्छी तरह देख लिया है ।

कामना—पर उससे भी तो पूछो । यह शादी नहीं हो सकती ।

चन्दू—बाबा तैयार हैं । रूपा तैयार है । चलो रूपा । (दोनों चले जाते हैं ।)

कामना—मेरी आशा पर पानी पड़ गया । यही अकेला मुझे अच्छा लगता था । इसकी आँखों में मुझे अपनापन दिखाई देता था । मैं ऐसा रूप चाहती थी, मैं ऐसी आँखें चाहती थी । मैं अब शादी नहीं कर सकती । मुझे बाबा जैसी आँखें अच्छी लगती हैं, चन्दू जैसी आँखें अच्छी लगती है । रूपा जैसी आँखें अच्छी लगती हैं । यह मुझे क्या हो गया ? मैं अपने मन से परेशान हूँ । मैं अपने से परेशान हूँ । क्या करूँ ? क्या करूँ मैं ? (टहलने लगती है ।)

[पर्दा गिरता है ।]

तीसरा दृश्य

[११ फरवरी, समय शाम के ६ बजे। नेपथ्य में दूर शहनाई सुनाई देती है। कामना उसी कमरे में अलमारी में से कपड़े निकालती हुई रुक जाती है और शीशे में अपनी शक्ल देखती है।]

कामना—बाबा कहते हैं कि चन्दू के ब्याह के साथ तेरा भी ब्याह हो जाता तो कितना अच्छा होता! पर मैं क्या करूँ? मैं ब्याह नहीं कर सकती। मुझे अब कोई भी अच्छा नहीं लगता। जो अच्छा लगता था उसमें दुर्भाग्य ने अडंगा लगा दिया। ये कपड़े मेरे विवाह के लिए इकट्ठे किये गए थे। ये गहने, इन कपड़ों से रूपा कितनी सजेगी! (गले का हार पहनकर) सजता तो है। यह सोने का टीका! (बालों में खोंसकर माथे में लटकाती हुई) अरे, मैं तो खुद ही बहू बन गई। मैं भी कैसी पागल हूँ, कोई देखेगा तो!

मनोरमा—(मनोरमा प्रवेश करती है।)—कामना कामना, अरे तू यह क्या कर रही है? पर मैंने यह क्या सुना?

कामना—(उतारती हुई) क्या?

मनोरमा—सचमुच तुझे बहुत अच्छा लगता है। कामना, जरा पहन न। सुना, चन्दू का रूपा से ब्याह हो रहा है। ला, मैं तुझे पहनाऊँ।

कामना—नहीं नहीं, रहने दे, देर हो रही है। यह सब रूपा के लिए निकाल रही थी।

मनोरमा—(आह भरकर) कहाँ है रूपा?

कामना—नहाकर आ रही है।

मनोरमा—मैंने तुझसे कहा था, यह तुम्हारा नौकर लड़का नहीं लगता, वही हुआ।

कामना—तू गहने चुन, मैं रूपा को लेकर आती हूँ। (लाती है।)

मनोरमा—(चिल्लाकर) लगता है जैसे यह तेरी ही बहन हो।

कामना—चुप रहो। लो गहने पहनाओ। (दोनों शृङ्गार करती हैं।)

कामना—आज कितनी अच्छी शाम है ! रूपा, क्या तुम इसीलिए आई थीं इस घर में। (उदास हो जाती है ।)

मनोरमा—माथे का टीका ठीक से खोंसो। लाओ मैं पहनाऊँ ।

कामना—कड़े कसे आते हैं ।

मनोरमा—मेहनती हाथ हैं न ।

कामना—लेकिन लड़कियों जैसे मुलायम ! चन्दू को इन्हीं कड़ों से पीटा करना हाँ ।

मनोरमा—अरी पति क्या पिटने के लिए होता है ? अब तो बोल भी नहीं निकलता ।

कामना—दुलहिन जो हुई। भाभी, मेरे सब कसूर माफ कर देना ।

रूपा—कसूर तो मेरा ही है जो मैं आदमी न बनी रह सकी । तुम्हारे भाई ने मुझे पुरुष से स्त्री बना दिया ।

कामना—मैंने तो चाहा था कि तू लड़का बनी रहती, पर तू ही नहीं रही ।

मनोरमा—(**हँसकर**) फिर जब भेद खुलता ?

कामना—भेद अपनों के लिए ही होता है मनोरमा ।

[**चन्दू का प्रवेश**]

चन्दू—कामना, यह क्या ?

मनोरमा—(**मुस्कराकर**) रूपा है रूपा, अभी से भूल गए ।

चन्दू—यह रूपा है, यह रूपा है ! बिलकुल लगता है····

मनोरमा—सचमुच कामना जैसी लगती है ।

[रूपा का बूढ़ा दादा लकड़ी टेके आता है । सब हैरान हो जाते हैं ।]

चन्दू—तुम कौन ?

दादा—मेरी रूपा !

रूपा—(**बुड्ढे से चिपटकर**) दादा ! (**सब देखते हैं ।**)

मनोरमा—कौन है ?

दादा—(**हाँफता हुआ**) मैं ही इसका बुड्ढा बाप हूँ भैया ! मैंने

ही इसे पाला-पोसा है। आज मुझे बहुत खुशी है भैया। सुखी रहे, यही मैं मनाता हूँ भैया।

चन्दू—इसको लड़का बनाकर नौकरी क्यों कराई दादा, बैठो, बैठ जाओ।

दादा—(लकड़ी के सहारे बैठकर दम लेता है।) क्या बताऊँ भैया, क्या बताऊँ! मेरी रूपा बचपन से ही बहुत होशियार है। अपने-आप ही इसने पढ़ना सीखा। जाने कैसे सीखा! जब इसकी माँ मर गई और मैं बीमार हो गया तब सब बकरियाँ-भेड़ें मेरी दवा-दारू में बिक गईं, सब बिक गईं भैया।

चन्दू—फिर?

दादा—इसने एक दिन कहा, मैं नौकरी करूँगी दादा। मैंने कहा, बेटी, तेरा रूप परी का है। तू नौकरी कैसे करेगी मेरी रानी बेटी। थोड़ी देर में इसने पगड़ी बाँध ली, कुरता पहन लिया और धोती कसकर बोली, यों करूँगा मैं नौकरी! बिलकुल लड़का हो गया। रूपा लड़का बन गया।

मनोरमा—तब इसने नौकरी की?

दादा—हाँ बेटी, तब इसने मजदूरी करके मेरी सेवा की। मैं दिन-भर पड़ा रहता। यह रात को आकर मेरी सेवा करती।

[चन्दू रूपा को मुस्कराकर देखता चला जाता है।]

मनोरमा—पड़ोसियों ने कुछ नहीं कहा?

दादा—पड़ोसियों ने कुछ दिन देखा, फिर चुप हो गए। और पड़ोस में है ही कौन, एक अन्धा सरगा और एक मैं। हमारी झोंपड़ी शहर से दूर है न!

मनोरमा—तुमसे इसकी शक्ल तो नहीं मिलती, बिलकुल नहीं मिलती दादा!

दादा—अब एक ही कामना है, इसके हाथ पीले हो जायँ तो मैं सुख से मरूँ। तुम लोगों की दया से आज इसका ब्याह हो रहा है। बस, और कोई इच्छा नहीं है। मैं कन्यादान कर लूँ।

पण्डित—(आकर) जल्दी कीजिए, देर हो रही है, मुहूर्त में सिर्फ आध घण्टा बाकी है। लड़की को भेजिए।

मनोरमा—हाँ, बस चले चलो, दादा।

[रूपा दादा से चिपटकर रोने लगती है।]

दादा—हाँ चलो! (लकड़ी के सहारे उठता है।)

चन्दू—(प्रवेश करके) दादा आप यहीं बैठिए!

रूपा—क्यों?

चन्दू—नहीं, इनको यहीं रहने दो, तुम चलो। लोग देखेंगे। मनोरमा, ले आओ रूपा को, मैं जाता हूँ।

रूपा—देखेंगे तो देखने दो। मैं अपने बाप का तिरस्कार नहीं होने दूँगी। मैं गड़रिया की लड़की हूँ। यह कहने में मुझे कोई अपमान नहीं है।

दादा—(बैठकर) रहने दे बेटी, मैं बैठा हूँ।

रूपा—नहीं दादा, तुम्हें चलना होगा।

मनोरमा—मान जाओ, ज़रा सी देर की बात तो है ही, फिर तो दादा हैं ही।

रूपा—(दृढ़ता से) सब काम दादा करेंगे।

चन्दू—बात न बढ़ाओ रूपा, दादा को यहीं रहने दो।

रूपा—(दादा के पास बैठकर) मैं नहीं जाऊँगी।

दादा—(रूपा के सिर पर हाथ फेरते हुए) तू जा बेटी, जा, विघ्न मत डाल। मैं यहीं बैठा हूँ।

रूपा—नहीं दादा, तुम्हारे बिना रहे यह ब्याह नहीं होगा। मैं तुम्हारी लड़की हूँ।

[बाहर से आवाज आती है— 'कन्या को भेजो जल्दी।']

दादा—(आँखों में हर्ष के आँसू भरकर) मेरी बेटी जा! आहा कितना शुभ दिन है! मैं गड़रिया हूँ। वहाँ बड़े-बड़े आदमी हैं। मेरा जाना.......

रूपा—नहीं दादा, मैं गडरिया की लड़की हूँ। (मनोरमा से) सब को मालूम तो है, फिर ऐसी क्या बात है !

मनोरमा—बाबा की आज्ञा है। चन्दू भी नहीं चाहते। अच्छा बाबा से कहती हूँ। (मनोरमा जाती है।)

दादा—बेटी ! (आँखों में आँसू भरकर रूपा के सिर पर हाथ फेरता है।) कितनी अच्छी बात है ! मेरी लड़की ऊँचे घर जा रही है। यही तेरे लायक था। तू कोई छोटी है, बड़े घर की है।

रूपा—(चौंककर) बड़े घर की, क्या मतलब ? क्या मैं तुम्हारी लड़की नहीं हूँ दादा ?

दादा—(अपने को सँभालकर) क्यों नहीं, क्यों नहीं ? और किस की है ? तेरा रूप, तेरे गुन बड़े घर के लायक हैं, रूपा।

रूपा—तुम अकेले रह जाओगे।

दादा—मेरा सुख तेरे सुख में है बेटी !

रूपा—नहीं दादा, तुम मेरे पास रहना, मैं तुम्हारी सेवा करूँगी।

दादा—लड़की के घर कोई रहा है, जो मैं रहूँगा। मैं तुझे देखने आया करूँगा।

रूपा—क्या तुम इतना चल सकोगे ?

दादा—(हँसकर) क्यों नहीं चल सकूँगा ? अपनी बेटी को देखने उड़कर भी आ सकता हूँ।

[मनोहर सिंह, चन्दू, मनोरमा का प्रवेश]

मनोहर—क्या बात है, कैसा झगड़ा है ? (रूपा चुप दादा से सटकर खड़ी हो जाती है।) रूपा बेटी, यह तेरा सौभाग्य है कि तेरा ब्याह चन्दू से हो रहा है। हम जैसा कहें वैसा तुझे करना चाहिए। मनोरमा, ले जा इसे।

[दादा आँखें फाड़कर मनोहरसिंह को देखता रहता है, चुपचाप।]

मनोरमा—(पास आकर) चलो रूपा ! (रूपा चुप खड़ी रहती है।)

मनोहर—(**डपटकर**) बोल, क्या तू चाहती है हमारी नाक कट जाय ? तू अब बड़े घर जा रही है, बाहर बड़े-बड़े आदमी बैठे हैं, उनके सामने क्या मैं कह दूँ कि तू गडरिया की लड़की है ?

रूपा—पर आप तो जात-पाँत नहीं मानते ।

मनोहर—(**उसी स्वर में**) नहीं मानता तो क्या मेरी इच्छा कोई चीज़ नहीं है । हटाओ इस बुड्ढे को । बुड्ढे, तुम्हें जो कुछ देना हो दे दो और जाओ ।

दादा—(**धीरे-धीरे उठकर मनोहरसिंह को देखता रहता है ।**) ठाकुर मनोहर सिंह !

मनोहर—(**तेजी में**) तू मुझे कैसे जानता है ?

दादा—मालिक ! (**पैरों पर गिर पड़ता है ।**)

मनोहर—क्या बात है, तू कौन है ?

दादा—(**उठकर हाथ जोड़ता हुआ**) मालिक, मालिक···

मनोहर—क्या है, जल्दी कह ।

दादा—चन्दू भैया से यह ब्याह नहीं हो सकता ।

मनोहर—क्यों ?

दादा—नहीं मालिक, यह ब्याह नहीं हो सकता ।

पण्डित—(**देर होती देखकर आता है ।**) जल्दी भेजिए कन्या को, देर हो रही है । (**चन्दू आता है ।**)

मनोहर—ठहरो ! (**दादा से**) हाँ क्या बात है, क्यों ब्याह नहीं हो सकता ?

दादा—नहीं मालिक, यह ब्याह नहीं हो सकता । हाय राम, कैसी विपदा आई । मेरी रूपा मुझे लौटा दो ठाकुर, मेरी रूपा मुझे दे दो ।

मनोहर—(**डपटकर**) साफ़-साफ़ क्यों नहीं कहता ?

दादा—(**सिर ऊपर उठाकर**) देख नहीं रहे ठाकुर, देखो ।

मनोहर—क्या देखूँ ?

दादा—यह आपकी लड़की···

मनोहर—(चौंककर) मेरी लड़की, रूपा मेरी लड़की ?

दादा—यह आपकी लड़की है। अठारह-बीस साल पहले की बात है, जब पैदा होते ही यह मर गई थी और आपने इसे गाड़ा था। मेरे सामने की बात है मालिक ! मैं बैठा-बैठा बकरियाँ चरा रहा था। थोड़ी देर बाद देखा कि ऊपर की मिट्टी हिल रही है। मैं डरा, पर हिम्मत करके मैंने मिट्टी हटाई। निकाला तो लगा इसमें जान है। मैं चुपचाप उठा लाया। मेरी मेहरिया ने इसे पाला-पोसा मालिक !

चन्दू—मेरी बहन ! मेरी बहन !! (एकदम उससे चिपट जाता है।)

मनोरमा—मैं कहती थी न कि दूसरी कामना है !

मनोहर—(सोचकर) तूने हमें खबर क्यों नहीं की ?

दादा—मेरे कोई बच्चा नहीं था। फिर आपके जान तो यह मर ही गई थी। भगवान् ने मुझे दिया, मैंने पाला मालिक ! (रूपा को गले से लगाकर) मेरी बेटी, आज कितनी खुशी का दिन है।

मनोहर—शादी नहीं होगी, सामान हटा दो, लोगों से कह दो।

मनोरमा का पिता—(आगे बढ़कर) शादी होगी, शादी होगी—मनोरमा की चन्दू से। क्यों ठाकुर मनोहर सिंह ?

मनोहर—चन्दू से पूछो।

चन्दू—पहले रूपा की शादी होगी बाबा ! धीरू, धीरू बाबू कहाँ हैं, ढूँढो उन्हें, कहाँ गये, अभी तो यहीं थे।

एक व्यक्ति—धीरू बाबू कामना के कमरे में हैं। डाक्टर आया है।

मनोहर—डाक्टर, डाक्टर क्यों ?

चन्दू—मैं कामना के कमरे में जाकर देखता हूँ। (जाता है।)

मनोहर—कामना को क्या हुआ ? देखो रूपा, क्या हुआ कामना को ? ओफ्, न जाने इस लड़की के भाग में क्या लिखा है ?

रूपा—मैं जाकर देखती हूँ। (सब जाते हैं, केवल मनोहर रह जाता है।)

मनोहर—(सब ओर देखकर) दादा। (चुपचाप उसके पास जाता है।)

दादा—मालिक !

मनोहर—यह मेरी लड़की नहीं है।

दादा—नहीं है, कैसे मालिक ! यह तो आपकी ही लड़की है।

मनोहर—(उसाँस लेकर) यह मेरी पाप की कमाई है दादा। उस समय मैं जवानी के नशे में पागल था। (दादा आँखें फाड़कर देखता है।) पागल था दादा, मेरे पड़ोस में एक ठाकुर रहते थे। वे फौज में नौकर थे। उनकी पत्नी से मेरा प्रेम हो गया, उसीमें यह सन्तान हुई। सबेरे-सबेरे हमने इसे गाड़ दिया।

दादा—वह औरत ?

मनोहर—जब बहुत दिनों बाद उसका मालिक आया तो वह अपनी पत्नी को ले गया। मैं नही जानता वह कहाँ है।

दादा—वह चली गई !

मनोहर—मेरा पाप छिपा लो दादा, इसे ले जाओ, मैं इसे रख नहीं सकूँगा। (अलमारी में से एक थैली निकालकर देता हुआ) लो रखो इसे। रूपा को मत बताना। जाओ। (निकल जाता है।)

दादा—(जोर से) मुझे नहीं चाहिए। रखो इसे, ठाकुर रखो ! (फेंकता है।)

[रूपा आती है।]

रूपा—यह क्या है ? (उठाकर) थैली, कैसी थैली है दादा !

दादा—(जो अब धीरे-धीरे होश में आता है।) चल बेटी, (उठता है।) तेरे लिए यहाँ जगह नहीं है।

रूपा—कहाँ ?

दादा—चल, फिर बताऊँगा, चल।

रूपा—पर क्यों, मैं अब कहाँ जाऊँगी ? कामना बहन बीमार हैं।

दादा—यहाँ सभी बीमार हैं रूपा, चल ! (उठता है।)

रूपा—मैं नहीं समझ पाई।

दादा—(रूपा का हाथ पकड़कर घसीटता हुआ) चल बेटी, तू इस ठाकुर की लड़की नहीं है। तू जारज सन्तान है।

रूपा—(चिल्लाकर) हैं, किसने कहा ? तुम झूठ बोल रहे हो।

दादा—(घसीटता हुआ) नहीं नहीं, चल, मैं तुझे यहाँ नहीं रहने दूँगा। इस मकान की दीवारों से आग निकल रही है। इसकी हवा में जहर भरा है जहर, रूपा ! मैं नहीं जानता था, मैं भोला आदमी हूँ............

रूपा—(हाथ छुड़ाकर) किसने कहा कि मैं जारज सन्तान हूँ ?

दादा—(ठहरकर) ठाकुर ने।

रूपा—बाबा ने ?

दादा—हाँ, जवानी में पड़ोस की एक ठकुरानी से इनका प्रेम हो गया तब तू हुई। बदनामी के डर से पैदा होते ही तुझे ले जाकर गाड़ दिया।

रूपा—(खोई हुई-सी, होश में आकर) मेरी माँ कहाँ है ?

दादा—वह फौज के किसी ठाकुर की औरत थी, उसका मालिक उसे आकर ले गया। चल बेटी, जितनी जल्दी हम निकल सकें, उतना ही अच्छा है। (घसीटता है।)

[रूपा पत्थर की तरह जड़ होकर देखती रहती है, आँखों से अंगारे निकलते रहते हैं, फिर एकदम आँसू।]

दादा—चल बेटी चलें, देर हो रही है।

रूपा—(अपने में खोई-सी) मैं नहीं जाऊँगी, तुम जाओ। जाओ तुम।

दादा—(रुककर) फिर कहाँ जायगी ?

रूपा—कुछ नहीं कह सकती ? मैं तुम्हारे साथ नहीं जाऊँगी। मेरा रास्ता अलग है। तुम जाओ।

दादा—चल बेटी, मैं किसको अपनी बेटी कहकर पुकारूँगा ?

रूपा—(चिल्लाकर) मैंने कह दिया, एक बार कह दिया, तुम जाओ। (एक-एक करके सब गहने उतारकर फेंकती है।) लो, लो, यह लो।

चन्दू—(एकदम प्रवेश करके) ठहरो, ठहरो रूपा।

रूपा—(क्रोध में भरकर) क्यों ठहरूँ ? मैं कौन हूँ तुम्हारी ?

चन्दू—मैंने सब सुन लिया है। तुम मेरी बहन हो। तुम्हारे ब्याह के बाद मेरा ब्याह होगा।

रूपा—(क्रोध में) मैं तुम्हारे पिता की जारज सन्तान हूँ।

चन्दू—फिर भी तुम मेरी बहन हो।

[मनोहर तथा अन्य लोगों का प्रवेश।]

मनोहर—चलो, जल्दी करो बेटा। पण्डित जी, लड़की को तैयार करो, मुहूर्त निकला जा रहा है।

[चन्दू गुमसुम-सा खड़ा रहता है।]

मनोहर—(भीतर सहमा-सा, हिम्मत करके) क्या हुआ, चल न ! कामना की तबियत अब ठीक है, चल चन्दू।

चन्दू—मेरी शादी उस समय तक नहीं होगी जब तक······

मनोहर—मैं तेरा पिता हूँ।

चन्दू—और मैं आपका पुत्र। मैं पिता का पाप धो डालना चाहता हूँ।

मनोहर—बकवास बन्द करो, जैसा मैं कहता हूँ, करो। डाक्टर, लड़की को तैयार करो। मेरी एक ही साध है, चन्दू का ब्याह।

[धीरू के साथ कामना आकर रूपा के कन्धे पर हाथ रखती है।]

कामना—धीरू बाबू !

मनोहर—हमें पहले चन्दू की शादी करनी है। लग्न बीती जा रही है।

चन्दू—रूपा आपकी पुत्री है।

मनोहर—जो कहता हूँ, वह करो।

चन्दू—आपके पाप······

मनोहर—चुप रह बदमाश कहीं का ! (नरम पड़कर) कहना नहीं मानता ?

कामना—(आगे बढ़कर) बाबा, रूपा कैसी भी हो, मेरी बहन है। हम दोनों एक ही पिता की सन्तान हैं।

मनोहर—(कुछ देर सोचते हुए) ऐसा कभी नहीं हुआ बेटी।

कामना—अब ऐसा ही होगा बाबा !

मनोहर—मेरी कुलीनता का खयाल कर।

चन्दू—कुलीनता उसी समय समाप्त हो गई।

कामना—तुम चुप रहो चन्दू !

मनोहर—इसे कौन स्वीकार करेगा ? मेरे पाप की सन्तान।

धीरू—मैं उपस्थित हूँ बाबा !

रूपा—मैं ब्याह नहीं करूँगी।

कामना—(रूपा के कन्धे पर हाथ रखकर) तुम मेरी बहन हो रूपा ! मैं तुम्हारी बड़ी बहन हूँ।

रूपा—(उसी स्वर में) मैं ब्याह नहीं करूँगी, यह मेरा अपमान है। चलो दादा, चलो !

चन्दू—इस अपमान को धोने के लिए ही धीरू बाबू आगे बढ़े हैं।

धीरू—रूपा निर्दोष है, मैं उसे स्वीकार करता हूँ।

मनोहर—मैं बहुत कमजोर हूँ।

कामना—समय कमजोरी को धो डालने के लिए आगे बढ़ आया है बाबा ! धीरू, आप महान् हैं। चलो रूपा !

मनोहर—यह मैं क्या देख रहा हूँ ?

कामना—तैयारी करो चन्दू, तैयारी करो धीरू बाबू, चलो। पिता के पापों को उसकी सन्तान ही धो सकती है। हमें नये समाज का निर्माण करना है। धीरू चलो।

[नेपथ्य में शहनाई बजने लगती है। और एक कोरस-गान]

हमें समाज बदलना होगा, आगे बढ़ो, बढ़ो !
ऊँच-नीच है नहीं कहीं भी, मिलकर चढ़ो चढ़ो
नया गगन है, चाँद नया है
धरती नई-नई ।
सूरज नया, नई आशा है
नई उमंग बही ।
कदम मिलाकर चलो डरो मत समय बुलाता है !
नई जिन्दगी फूट रही है, जन-जन गाता है !
हमें समाज बदलना होगा, आगे बढ़ो बढ़ो !

[धीरे-धीरे गाना समाप्त होता है । पर्दा गिरता है]